सचित्र प्रेरक बाल मासिक

देवपुत्र

ISSN-2321-3981

पौष २०७८ जनवरी २०२२

विजयी विश्व तिरंगा प्यारा

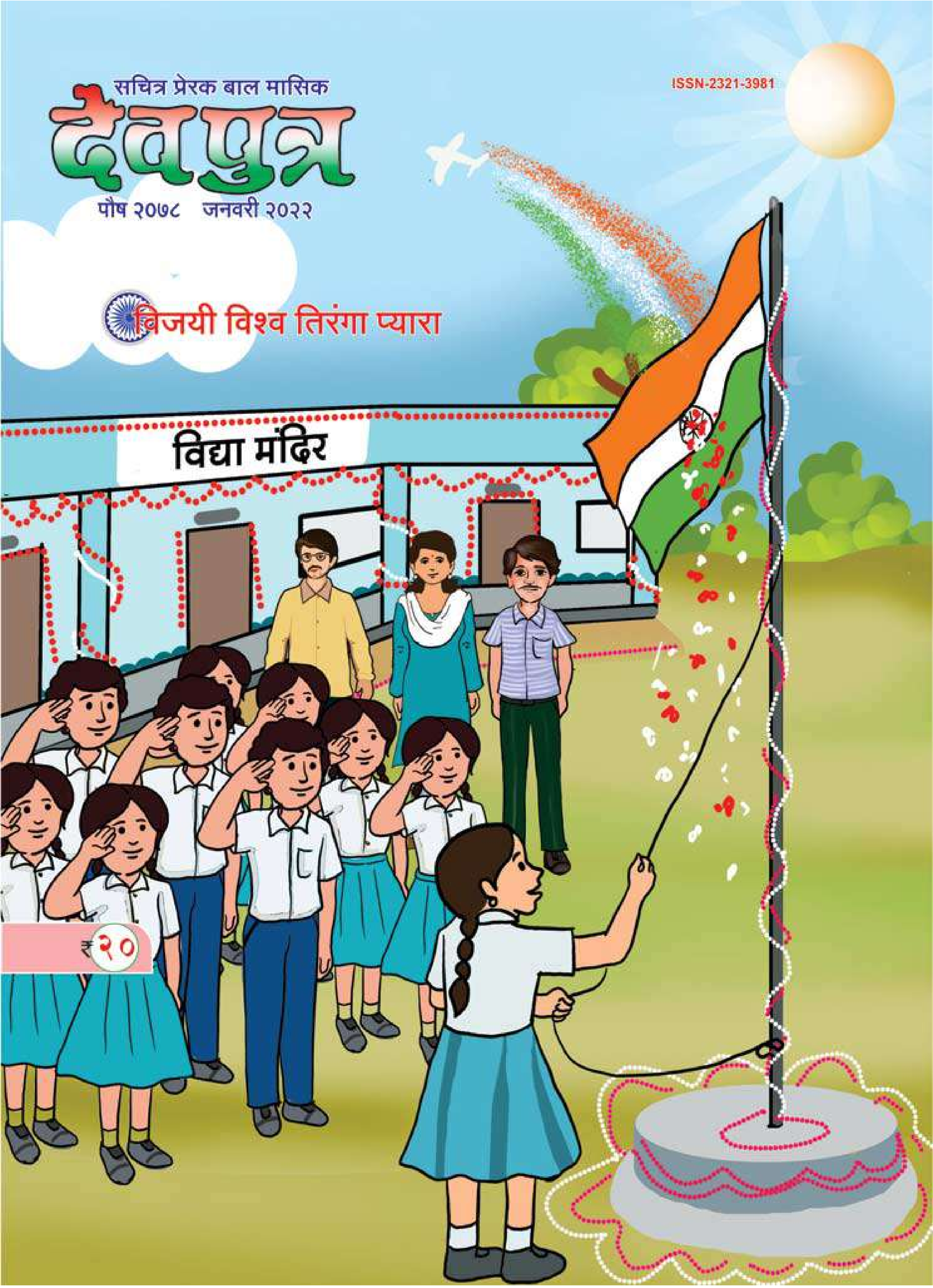

₹२०

कविता

सोने सा देश

– शीला पांडे

चम–चम सोने–सा यह देश।
सबका अलग–अलग है वेश।।
सीना खड़ा हिमालय ताने।
देश, विदेश सभी पहचाने।।

वन–औषधि की धरती जननी।
संस्कृति भाषा है मन पहनी।।
विविध भाँति की बोली–बानी।
संस्कृतियों की चूनर धानी।।

सीमा पर प्रहरी ललकारें।
पूजा–घर गूँजें जयकारें।।
सूरज चंदा किरनें उतरें।
ऋतुएँ हँसें अन्न–सब उभरें।।

सिन्धु यहाँ गरजे गुर्राए।
सुनकर दुश्मन भी थर्राए।।
गगन, पवन, बादल मिल बरसें।
हरियाली तन–मन से हरषें।।

बालक–वृन्द सभी नर–नारी।
पग–पग विचरें जन–जन बारी।।
अद्‌भुत लोकतन्त्र का पहरा।
अन्तर में पैठा है गहरा।।

सब मिलकर गहना बनते हैं।
माँ के तन–मन पर सजते हैं।।
माँ गिरि नदियों संग बलखाती।
वेद, पुराण सहित इठलाती।।

– लखनऊ (उ. प्र.)

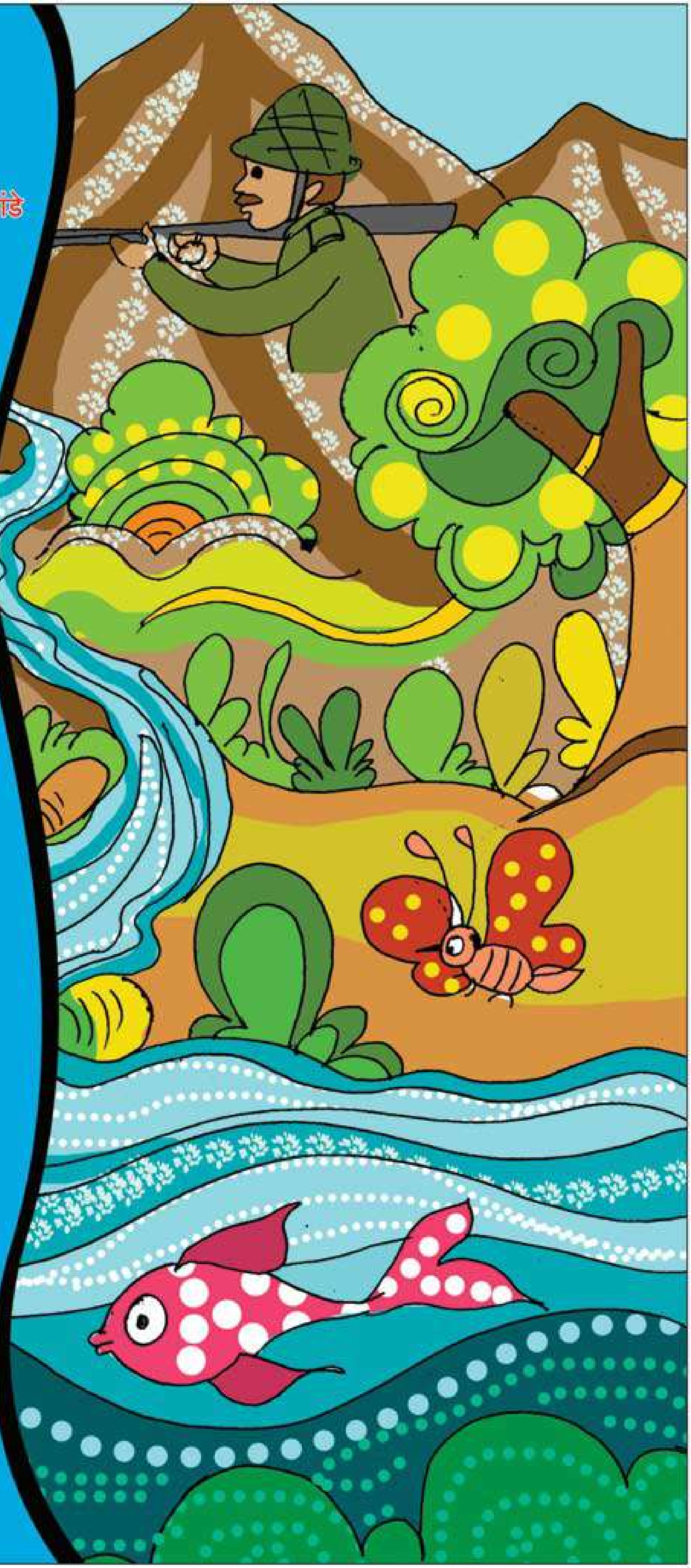

सचित्र प्रेरक बाल मासिक

देवपुत्र

(विद्या भारती से सम्बद्ध)

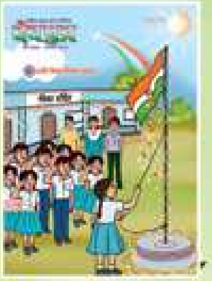

पौष	२०७८	वर्ष	४२
जनवरी	२०२२	अंक	७

प्रधान संपादक
कृष्ण कुमार अष्ठाना

प्रबंध संपादक
शशिकांत फड़के

मानद संपादक
डॉ. विकास दवे

कार्यकारी संपादक
गोपाल माहेश्वरी

मूल्य

एक अंक	:	२० रुपये
वार्षिक	:	१८० रुपये
त्रैवार्षिक	:	५०० रुपये
पंचवार्षिक	:	७५० रुपये
पन्द्रहवर्षीय	:	१४०० रुपये
सामूहिक वार्षिक	:	१३० रुपये

(कम से कम १० अंक लेने पर)

कृपया शुल्क भेजते समय चेक/ड्राफ्ट पर केवल 'सरस्वती बाल कल्याण न्यास' लिखें।

संपर्क

४०, संवाद नगर,
इन्दौर ४५२००१ (म. प्र.)
दूरध्वनि: (०७३१) २४००४३९

e-mail:
व्यवस्था विभाग
devputraindore@gmail.com
संपादन विभाग
editordevputra@gmail.com

अपनी बात

प्यारे भैया–बहिनो!

स्वतन्त्र भारत के दो महान राष्ट्रीय पर्व हैं स्वतंत्रता दिवस और गणतंत्र दिवस। इस माह आने वाला गणतंत्र दिवस स्वतंत्रता के अमृत महोत्सव वर्ष में आने वाला गणतंत्र दिवस है। गौरवशाली भारत के विश्व के सबसे विशाल लोकतंत्र का गणतंत्र दिवस।

स्वतंत्र, गणतंत्र और लोकतंत्र तीनों शब्दों में 'तन्त्र' शब्द जुड़ा है यदि इस सर्वनिष्ठ शब्द को अलग सहेज लें तो शेष शब्द बचे 'स्व', 'गण' और 'लोक'। 'स्व' यानि 'अपना', 'गण' यानि 'समूह' एक सुगठित इकाई और 'लोक' यानि जनता या समाज।

स्वतंत्र का अर्थ केवल आजादी नहीं है केवल परतंत्रता से मुक्ति नहीं है अपितु यह स्वतंत्रता का एक भाग ही है। अन्य किसी 'तंत्र' यानि सिस्टम यानि व्यवस्था से मुक्त होकर अपना तंत्र, अपनी व्यवस्था विकसित करके के बाद ही हम पूरे स्वतंत्र माने जा सकते हैं।

यह 'तंत्र' किसके लिए? भारत के 'लोक' के लिए और इसे निर्माण किसे करना है? तो वह भी एक–दो या कुछ व्यक्तियों द्वारा नहीं जनता द्वारा ही होना है। इसीलिए 'लोकतंत्र' को 'जनतंत्र' भी तो कहते हैं। यह लोक व्यक्ति–व्यक्ति में बिखरा हुआ रहने पर यानि अपनी ढपली अपना राग होने पर 'भीड़' कहलाएगा इसलिए सुदृढ़ जनतंत्र के लिए हमारा एक 'गण' के रूप में सुव्यवस्थित होना आवश्यक है। हमारी व्यक्तिगत स्वतंत्रताएँ हैं, विविधताएँ और भिन्न रुचियाँ भी हैं लेकिन हम सब 'एक राष्ट्रीय' है हमारी राष्ट्र के प्रति निष्ठा, कर्त्तव्य, अपनत्व एकरूप है। 'गण' अर्थात् एक लक्ष्य, एक ध्येय, एक पद्धति से कार्यरत, एकात्म लोगों का समूह अर्थात 'हम भारतवासी'। 'हम' शब्द कहते ही सामूहिकता और संगठितता का भाव मन में आता है। 'भारतवासी' कहते ही हमारी अपनी–अपनी आजीविका, खानपान, रहनसहन, भाषा–भूषा, परिस्थितियाँ विभिन्न होने पर भी 'एक राष्ट्र' के 'राष्ट्रीयजन' होने का भाव स्वयमेव निश्चित हो जाता है। यह विचार ही हमें समरस व समान बनाता है और यही तो है हमारे गणतंत्र का आधार।

आइए, स्वतंत्रता के अमृत महोत्सव की बेला में देश के भविष्य रूप आप बच्चे भारत के 'जन', 'गण' बनकर पूरे 'मन' से 'तंत्र' को श्रेष्ठ से श्रेष्ठतम व सुदृढ़ बनाने का संकल्प लें। गणतंत्र दिवस की हार्दिक मंगल कामनाएँ।

आपका
बड़ा भैया

web site - www.devputra.com

॥ अनुक्रमणिका ॥

कहानी

- साथी हाथ बढ़ाना -प्राजक्ता देशपांडे ०५
- सूरज रथ के घोड़े -रामगोपाल राही ०८
- पतंग का संदेश -अनिल अग्रवाल १८
- भलाई के पंख -इन्द्रजीत कौशिक २८
- छोटी सी नायिका -एस. भाग्यम शर्मा ३६
- बहादुर माँ -डॉ. राजीव गुप्ता ४०
- मूर्ख नगरी -संजीव जायसवाल 'संजय' ४४

प्रसंग

- भारत माता की पुकार -डॉ. चक्रधर नलिन ४८

बाल प्रस्तुति

- हे संविधान! -गार्गी माहेश्वरी ४६
- बेटी तेरी जय हो -राधिका ठाकुर ४८

आलेख

- भारत का तूफानी... -कुमुद कुमार १२
- क्रांतिकारी जयी राजगुरु -डॉ. श्रीकृष्णचंद्र तिवारी 'राष्ट्रबंधु' ४२

कविता

- सोने सा देश -शीला पांडे ०२
- गणतंत्र पर्व -डॉ. विनोचंद्र पाण्डेय 'विनोद' ०७
- आओ बच्चो! तुम्हें... -विष्णुगुप्त 'विजिगीषु' २२
- पावन धरा स्वराजद्वीप.. -स्नेहलता ३३
- राष्ट्र चिन्ह राष्ट्र ध्वज... -प्रो.सी.बी.श्रीवास्तव 'विदग्ध' ३८
- ये बचपन -वसीम अहमद नगरामी ३९
- सूरज दादा चिढ़कर... -श्याम पलट पाण्डेय ४३
- गौरवशाली मैं विश्व... -राजेन्द्र श्रीवास्तव ४९
- भारत की बेटी -क्षमा पाण्डेय ४९
- चारण बनकर गाएँ -बलदाऊ राम साहू ५१

स्तंभ

- अशोक चक्र : साहस का सम्मान १४
- सरल विज्ञान -संकेत गोस्वामी १५
- बाल साहित्य की धरोहर -डॉ. नागेश पाण्डेय 'संजय' १६
- सच्चे बालवीर -रजनीकांत शुक्ल २६
- आपकी पाती - ३०
- विज्ञान व्यंग्य -संकेत गोस्वामी ३१
- गोपाल का कमाल -तपेश भौमिक ३४
- छः अंगुल मुस्कान - ३५
- शिशु गीत -नारायण लाल परमार ३९
- पुस्तक परिचय - ५०

संस्मरण

- मेरे छोटे मामा -डॉ. सरोजिनी कुलश्रेष्ठ २४

बौद्धिक क्रीड़ा

- बढ़ता क्रम -देवांशु वत्स ०६

चित्रकथा

- सबसे आगे -देवांशु वत्स ११
- नहीं भूला -संकेत गोस्वामी २१
- स्याही के दाग -देवांशु वत्स ४७

क्या आप देवपुत्र का शुल्क नेट बैंकिंग से जमा करा रहे हैं? तो कृपया ध्यान दें!

देवपुत्र का शुल्क इसकी प्रकाशन संस्था - **सरस्वती बाल कल्याण न्यास** के खाते में ही जमा कराएँ।
विवरण इस प्रकार है- खातेदार - **सरस्वती बाल कल्याण न्यास** बैंक - **स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, एम.वाय.एच.परिसर शाखा, इन्दौर** खाता क्रमांक-**38979903189** चालू खाता **(Current Account) IFSC- SBIN0030359** राशि जमा करने के बाद जमा पर्ची को देवपुत्र के ई-मेल **ID devputraindore@gmail.com** पर अवश्य भेजिए। नेट बैंकिंग में प्रेषक के कॉलम में पहले अपना स्थान लिखें फिर **सरस्वती शिशु मंदिर** का संक्षेप लिखें तो सन्देश ठीक आता है। उदाहरण के लिए -सरस्वती शिशु मंदिर, संजीत मार्ग, मंदसौर ने देवपुत्र का शुल्क भेजा तो उन्हें प्रेषक में लिखना चाहिए - **''मन्दसौर संजीत मार्ग SSM''** आशा है सहयोग प्रदान करेंगे।

साथी हाथ बढ़ाना

– प्राजक्ता देशपाण्डे

हर वर्ष मकर संक्रांति पर आकाश में उड़ती रंग–बिरंगी पतंगों को देख देव का मन पतंग उड़ाने का करता लेकिन अपने बाएँ हाथ को देख वह निराश हो जाता जिसके अँगूठे और उससे लगी दो अँगुलियाँ बचपन से ही अविकसित थीं। पिताजी छोटे–से पद पर थे, जैसे–तैसे परिवार का भरण–पोषण हो रहा था। ऐसे में कोई महंगा उपचार करवा पाना भी असंभव था। दाएँ हाथ के ठीक होने के कारण ही वह पढ़ाई–लिखाई के साथ अपने दैनिक कार्य तो कर पाता, लेकिन कई अवसरों पर स्वयं को असहाय अनुभव करता। फिर भी समझदार देव अपना दुख परिवार के सामने प्रकट नहीं करता।

कुछ दिनों पहले उनके नए पड़ोसी आए, जिनका बेटा श्रेय, देव का हमउम्र था। चूँकि दोनों घरों की छतें सटी हुई थीं। अक्सर आमना–सामना होने पर उनमें थोड़ी बहुत मित्रता हो गई। एक दिन देव ने देखा कि श्रेय एक बहुत बड़ी और सुंदर पतंग को उड़ाने का प्रयत्न कर रहा है, लेकिन हर बार की असफलता से बौखलाकर वह चला गया। अब तो हर दिन श्रेय नई पतंग लाता, न उड़ा पाने की स्थिति में फटी हुई पतंग को वह गुस्से में पटककर चला जाता। चाहकर भी देव ने उससे कुछ बात नहीं कर पाता। उसने यह बात अपने पिताजी को बताई, जो उसके पतंग उड़ाने की दिली इच्छा से परिचित थे।

उन्होंने कहा– ''तो तुम उसकी सहायता कर सकते हो।''

''लेकिन कैसे? मेरे तो...'' कहते हुए वह उदास हो गया।

''तो क्या हुआ! दोखो माँजे की चकरी पकड़ना या पहली बार पतंग को ढील देने में श्रेय की सहायता ले लो। मुझे विश्वास है कि अपनी हिम्मत और लगन से तुम पतंग उड़ा सकते हो। एक अच्छी ऊँचाई मिलने पर पतंग की डोर श्रेय को पकड़ा देना, फिर देखो दोनों को कितना आनंद आएगा।'' पिताजी ने प्रसन्न होकर कहा।

''लेकिन वह नहीं माना या मुझसे नहीं हो पाया तो?'' देव ने शंका जताई।

''अपनी किसी भी कमी को कमजोरी नहीं ताकत बनाओ और काम शुरू होने से पहले ही हार मान लेना कायरता है।'' पिताजी ने समझाया।

अगले दिन श्रेय को छत पर देख देव ने कहा– ''अरे वाह! तुम्हारी पतंग तो बहुत सुंदर है खूब ऊपर जाएगी।''

''क्या खाक ऊपर जाएगी मुझसे से तो उठ भी नहीं पाती।'' श्रेय की आवाज में उदासी थी।

''तुम चाहो, तो मैं इसमें तुम्हारी सहायता कर सकता हूँ।'' देव ने कहा।

''सच! आपको उड़ानी आती है?'' कहते हुए श्रेय फुर्ती से दीवार फाँदकर पतंग के साथ देव की छत पर आ गया। उसके बाएँ हाथ को देख उसे दुःख हुआ।

''चलो! तुम पहले पतंग को ढील देकर ऊपर की ओर उड़ाओ बाद में माँजे की चकरी पकड़कर रखना।'' देव ने समझाया और पतंग की डोर अपने दाएँ हाथ में पकड़ी।

दोनों के आपसी तालमेल और प्रयत्न के बाद थोड़ी ही देर में उनकी पतंग हवा से बातें कर रही थी। अब उसकी डोर श्रेय के हाथ में और चकरी देव ने एक हाथ से पकड़ रखी थी। हँसते–खिलखिलाते मुखड़े की चमक ने उनकी प्रसन्नता प्रकट कर रही थी।

जहाँ दूर आसमान से उड़ती पतंग के इरादे को नई ऊँचाई दे रही थी, वही उड़ती पतंग को एक अच्छे मित्र को पाकर श्रेय भी बहुत प्रसन्न था।

– इन्दौर (म. प्र.)

बढ़ता क्रम 04

संकेत:– देवांशु वत्स

1. माता, जननी।
2. सम्मान, इज्जत।
3. स्वीकार कर लेना।
4. नक्शा।
5. वह स्थान, जहां व्यापार का माल रखा जाता है।
6. आंतरिक दुख।

1.	मा					
2.	मा					
3.	मा					
4.	मा					
5.	मा					
6.	मा					

उत्तर: 1. मा, 2. मान, 3. मानना, 4. मानचित्र, 5. माल गोदाम, 6. मानस-संताप।

गणतंत्र पर्व

– डॉ. विनोदचंद्र पाण्डेय 'विनोद'

अमर रहे गणतन्त्र हमारा।
है स्वदेश में शासन अपना।
सच हो राम–राज्य का सपना।।
जनता को अधिकार सभी हों,
चमके भारत भाग्य सितारा।
अमर रहे गणतन्त्र हमारा।।
सत्य–अहिंसा के चढ़ रथ पर,
बढ़ें प्रगति के पावन पथ पर।।
विश्व–शान्ति के बनें पुजारी,
समझें कुल समान जग सारा।
अमर रहे गणतन्त्र हमारा।।

भेद–भाव को दूर भगा दें।
हम आपस में प्रेम जगा दें।।
छिपा एकता में ही बल है,
यही बनाएँ अपना नारा।
अमर रहे गणतन्त्र हमारा।।
रहे न कोई दीन, भिखारी।
हों सम्पन्न सभी नर–नारी।।
सबको हों समान सुविधाएँ,
बहे निरन्तर सुख की धारा।
अमर रहे गणतन्त्र हमारा।।

– लखनऊ (उ. प्र.)

सूरज रथ के घोड़े

– रामगोपाल 'राही'

नवीं कक्षा में पढ़ रहा संजय शाला की छुट्‌टी होते ही घर आया। बस्ता रख कपड़े बदले और इतने में माँ खाना लेकर चली आई।

संजय माँ के हाथ से थाली लेकर छत पर चला आया। सर्दी के दिन थे जनवरी का महीना कड़कड़ाती सर्दी, दादी छत पर धूप सेक रही थी, संजय दादी के पास जा बैठा और खाना खाने लगा। बीच-बीच में संजय दादी से बढ़ रही शीत लहर व सर्दी की बातें भी करता रहा।

दादी बोली- ''संजय जानता है, यह शीत लहर क्या होती है ?''

दादी की बात सुन, दादी की ओर देख संजय तुरंत बोला- ''हाँ जानता हूँ दादी! अपना हाथ उठाकर कहने लगा उधर कश्मीर, उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश में बर्फबारी हो रही है, बर्फ गिर रही है, वहाँ से ठंडी हवाएँ, शीत लहर बन आ रही है।'' संजय ने अपनी सहज बुद्धि से शीत लहर की बात बता दी। फिर बोला- ''टी. वी. में भी तो रात शीत लहर का समाचार था दादी! बर्फबारी से पहाड़ी प्रदेशों में जन जीवन अस्त-व्यस्त हो गया वहाँ बर्फबारी हो रही है।'' दादी संजय की बात सुनकर मुस्कुरा कर बोली- ''अरे वाह बेटे! तू तो सब जानता है।'' फिर कहा- ''तेरा ज्ञान ठीक है।''

इतने में संजय की माँ शाल ओढ़कर छत पर उनके पास चली आई। आते ही बोली सूरज भी जैसे ठंडा हो गया बार-बार बादलों के पीछे चला जाता है। माँ के द्वारा सूरज का उल्लेख सुन संजय को सूरज के बारे में बाल सभा में किसी की सुनाई हुई कविता- ''सूरज रथ के घोड़े सात'' की याद आ गई। संजय मन ही मन सोचने लगा, बुदबुदाया भी सूरज रथ के सात घोड़े! अब सोचा सूरज रथ के सात घोड़ों के बारे में दादी से पूछे! दादी तो ज्ञान का भण्डार हैं। सेवानिवृत्त दादी तो उ.मा. विद्यालय की प्रधानाचार्य रही हैं सब जानती हैं। दादी तो घर का पुस्तकालय है इस प्रकार विचार करते-करते संजय बोला- ''दादी! शाला में बाल सभा में कविता में सुना है सूरज रथ के सात घोड़े होते हैं।'' अपनी सहज बुद्धि व भोलेपन से संजय बोला- ''दादी! आकाश में घोड़े यह कैसे दौड़ते होंगे ?'' संजय की बात

सुन दादी और माँ दोनों को हँसी आ गई। संजय की बात सुन दादी हँसते हुए बोली– ''बेटे! तुम विज्ञान पढ़ते हो तुम्हें तो यह बात पता होना चाहिए।''

सुन संजय बोला– ''दादी! अभी ऐसी बात पढ़ने को नहीं मिली।'' संजय ने फिर कहा– ''दादी! आप ही बता दो।'' सुन दादी ने कहा– ''बेटा! विज्ञान तर्क से सिद्ध हुई बात ही मानता है। फिर भी तुमने पूछा है तो मैं जो जानती हूँ वह बताती हूँ।'' दादी बोली– ''बेटे संजय! यूँ तो वेद–पुराणों में ग्रंथों में सूर्य के बारे में कई बातें हैं। किन्तु उन सबसे हटकर मैंने जो देखा अनुभव किया वह बात बताऊँ? बेटे! प्रथम बात तो यही है, सब देवी–देवता जिन्हें हम भारतवासी मानते हैं उनकी भक्ति करो, मंत्र बोलो, साधना करो, उपासना करो, व्रत करो, माला फेरो, जप करो। कहते हैं तब जाकर तपस्या का फल मिलता है।'' दादी ने फिर कहा– ''सूर्य भगवान बिना माला फेरे बिना भक्ति, बिना मंत्र जप के प्रतिदिन सुबह सबको दर्शन देते हैं। उजाला करते हैं, ऊर्जा देते हैं, अंधकार को दूर करते हैं।'' संजय तो सूरज रथ के घोड़ों के बारे में जानना चाहता था दादी की बात सुन संजय को लगा दादी बात टाल रही है।

दादी की बात सुन संजय बोला– ''यह बात तो ठीक है सूरज तो प्रतिदिन ही हमें दर्शन देता है।'' बाल जिज्ञासा के चलते संजय फिर बोला– ''दादी! सूरज रथ के सात घोड़े नहीं दिखते, रथ भी दिखाई नहीं देता? सूरज ही दिखाई देता है।'' संजय की बात सुन दादी विचार करने लगी थी– यह देख संजय को लगा अब दादी के ज्ञान का पिटारा खुलेगा ही खुलेगा। दादी बोली– ''बेटे संजय! विज्ञान के लोग तो सूर्य को आग का दरिया, आग का गोला मानते हैं। किन्तु ग्रंथों की बात अलग ही है, वेदों में सूर्य को जगत की आत्मा कहा है।''

दादी ने हाथ सूरज की ओर करके कहा– ''समस्त चराचर जगत की आत्मा सूर्य ही है। वैदिक काल में आर्य सूर्य की ही पूजा करते थे, सूर्य को ही कर्ता–धर्ता मानते थे। सभी ग्रंथों में सूर्य को ही महत्वपूर्ण माना गया है।'' इतने में संजय बोला– ''ओह! दादी! आप तो प्रवचन देने लग गईं। ठीक है यह सारी बातें होगी पर सात घोड़े वाली बात कौन सी है दादी?''

संजय की बात सुन दादी बोली– ''बताती हूँ बेटा! बताती हूँ। तुम्हारी पूछी हुई बात पर ही आ रही हूँ।''

दादी बोलने लगीं– ''सूर्य के प्रति ग्रंथों, शास्त्रों, वेदों, पुराणों में कई बातों का वर्णन मिलता है। सूर्य के रथ में सात घोड़े।'' दादी रुककर फिर बोलने लगी– ''मैंने धर्म–ग्रंथों में पढ़ा है, वह बड़ा ही आश्चर्यजनक है। सूरज रथ में पीछे सूर्यदेव बैठे होते हैं, उस रथ को अरुणदेव चलाते हैं अरुण देव का मुँह सामने की ओर नहीं होता। बल्कि पीछे बैठे सूर्यदेव की ओर होता है। समझा बेटे–घोड़ों की लगाम विपरीत दिशा में सूर्यदेव की ओर मुँह कर बैठे अरुण देव के हाथों में ही होती है।''

दादी फिर बोलीं– ''है ना आश्चर्य की बात।'' आगे कहा घोड़े अपने आप दौड़ते रहते हैं। मैंने तो कई बार सोचा घोड़ों के मुँह विपरीत दिशा में होते हैं ऐसे में घोड़े कैसे दौड़ेंगे? इस पर मुझे लगा ग्रंथों की बात है ऐसा ही होता होगा।'' दादी चाहती थी कि धर्म ग्रंथों की सूर्य के बारे में सारी बात संजय को बताऊँ। अब दादी बोलीं ही थीं– ''सूरज के बारह भाई होते हैं।'' इतने में संजय बोल उठा। दादी आप तो फिर से प्रवचन करने लग गईं, दादी! प्रवचन मत सुनाओ, बस रथ में सात घोड़ों की बात बता दो दादी।'' बाल मनोविज्ञान की धनी दादी संजय की बात सुन समझ गई। संजय को धर्म ग्रंथों की पुरानी बातें सुनने में रुचि नहीं है। फिर मन ही मन विचार कर संजय को सरलीकरण कर प्रतीकात्मक रूप में समझा दिया जाए।

दादी ने मन ही मन कुछ देर विचार किया सरलीकरण कर फिर बाद में बता दूँगी। दादी फिर धर्म ग्रंथों की बात कहने लगीं। दादी सूरज रथ के सात घोड़ों के नाम बताने लगीं। संजय घोड़ों के भी नाम की बात सुन हँसता रहा। फिर बोला– ''घोड़ों के भी नाम होते हैं क्या दादी?'' संजय फिर बोला– ''दादी! इतनी लम्बी बातें दिमाग में नहीं रहेगी, आप तो सात घोड़े क्यों नहीं दिखते सूरज ही दिखता है इस बारे में बता दें।'' फिर कहा ''दादी! प्रवचन मत सुनाओ सीधी सरल बात बताओ जो समझ में आ जाए।'' अब दादी ने सोचा यह पुरानी बातें

नहीं सुनना चाहता, इसे सरल करके ही बताऊँ। दादी बोलीं– ''सूरज रथ के सात घोड़े–सूर्य के प्रकाश के प्रतीक हैं।'' सात घोड़े प्रकाश के प्रतीक की बात सुन संजय फिर हँसने लगा– ''हा! हा! हा! हा! दादी सात घोड़े प्रकाश के प्रतीक! प्रकाश तो उजाले का नाम है, घोड़े तो जानवर हैं दादी! यह प्रतीक कैसे हो गए?''

दादी सिर पर हाथ रखते हुए बोलीं– ''अरे बेटे संजय! सुनो थोड़ा समझने का प्रयत्न करो मेरी बात को। सूर्य के प्रकाश में सात रंग होते हैं।'' थोड़ा रुकते हुए दादी बोलीं– ''यह तो सभी जानते हैं। बेटे! सूर्य की प्रत्येक किरण में सात रंग होते हैं सूर्य से प्रकाश निकलता है फैलता है।'' अपनी बात दोहराते हुए दादी ने कहा– ''सूर्य के प्रकाश की किरणों से निकले रंग सात प्रकार के होते हैं।'' रंगों की बात सुन संजय ध्यान से सुनने लगा। दादी को याद आया फिर कहा– ''संजय! बरसात के दिनों में इंद्रधनुष जब निकलता है उसमें भी सात रंग दिखाई देते हैं।'' दादी फिर बोलीं– ''बरसात में इंद्रधनुष कैसे बनता है याद है तुझे?'' संजय बोला– ''भूल गया दादी।''

इस पर दादी ने कहा– ''मैं समझाती हूँ। इंद्र धनुष कैसे बनता है?'' दादी बोलीं– ''इंद्रधनुष प्रकाश के परावर्तन व अपवर्तन और पानी की बूँदों में प्रकाश के विश्लेषण के कारण बनता है। सूर्व के प्रकाश की किरणें जब प्रिज्म से होकर निकली है तो वह सात रंगों में विभक्त हो जाती है, इसे प्रकाश का विश्लेषण कहते हैं। अर्थात पानी की बूँदों में प्रकाश के विश्लेषण गुजरने कारण इंद्रधनुष बनता है।'' फिर कहा– ''इंद्रधनुष आकाश में धनुषाकार चाप के रूप में दिखाई देता है। इंद्रधनुष में सात रंग होते हैं जिनका क्रम लाल, नारंगी, पीला, हरा, नीला, जामुनी, बैंगनी। बैंगनी कुछ कम दिखाई देता है। यह बरसात में इंद्रधनुष प्रकृति का कारनामा होता है। प्रकृति का अनूठा दृश्य होता है।'' फिर कहा– ''संजय! प्रकाश में सात रंग की बात समझ में आ गई?'' संजय सिर हिलाते हुए बोला– ''हाँ दादी! आ गई।''

यह बात ग्रंथ भी कहते हैं। सूर्य रथ के घोड़े सात रंग के थे। बेटे सूरज की रोशनी में सात रंग होते हैं। सूर्य रथ के घोड़ों के सात रंग, सूर्य प्रकाश में दिखने वाले सात रंग यों मानों सूरज रथ के सात घोड़ों के प्रतीक हैं। अब संजय स्वयं बोला– ''हाँ दादी! प्रतीक वाली बात समझ में आने लगी है।'' वह बोला– ''दादी! बाल्टी में साबुन के पानी में, तथा वैसे भी धूप में पानी में उठे बुलबुलों में सात रंग दिखाई देते हैं। यह बात तो थोड़ी समझ में आ रही है, मान लिया प्रकाश में सात रंग होते हैं। इन्हें घोड़े कैसे माने? थोड़ा और सरल करके बताओ ना।''

दादी बोलीं– ''संजय! सुनो, सूर्य हमसे बहुत दूर है, उसकी किरणें हमारे तक पहुँचती हैं। सूर्य की इन सप्तवर्णा सात रंग की किरणों को पुराने समय से ही लोगों ने आलंकारिक भाषा में सूरज की सतरंगी किरणों को सूरज रथ के सात घोड़ों की उपाधि दे रखी है समझे।'' दादी ने पुनः दोहराते हुए कहा– ''आलंकारिक भाषा में।'' आलंकारी भाषा का नाम सुन संजय को सारी बात समझ में आ गई, तत्क्षण मन ही मन सोचा हाँ अलंकारों में तो ऐसे ही तुलना, उपाधि दी जाती है। स्वयं दोहराते हुए– किरणों की उपाधि सूरज के सात घोड़ों से यह सही प्रतीत होता है। संजय की बात सुन दादी संतुष्ट हुईं मन ही मन सोचा संजय को समझ में आ रहा है।

दादी फिर बोलीं– ''संजय! तुमको एक और रोचक आश्चर्यजनक बात बताती हूँ।'' वह बोलीं– ''संजय सूरज रथ का एक ही पहिया होता है।'' दादी की बात सुन संजय हँसने लगा हँसता ही रहा। फिर बोला– ''एक पहिया, सात घोड़े? अरे दादी! यह तो अटपटी बात लगती है।'' दादी बोलीं– ''यह भी प्रतीकात्मक आलंकारिक भाषा में ही है। एक पहिया अर्थात् सूर्य ही है। पहिया में बारह तीलियाँ बारह महीने दर्शाती हैं। इन्हीं से ऋतु का विभाजन होता है। सौर मंडल व ग्रहों की बात बताऊँ सूर्य सबमें बड़ा होता है। सभी ग्रह सूर्य के चक्कर लगाते हैं। सूर्य की गति इन्हीं से समझी जाती है। सब ग्रह सूर्य से ही ऊर्जा पाते हैं। सूर्य हमसे बहुत दूर है उसकी किरणें हम तक पहुँचती हैं।'' संजय बोला–''ठीक है दादी! समझ गया।''

– बूँदी (राजस्थान)

सबसे आगे
चित्रकथा: देवांशु वत्स
सुबह-सुबह सभी बच्चे छब्बीस जनवरी की परेड देखने जा रहे थे...
बच्चों, मेरी कार स्टार्ट करने में जरा मेरी मदद कर दो।
नहीं, हमलोगों को देर हो जाएगी!
नताशा, हमें मदद करनी चाहिए
ठीक कहते हो राम!
फिर सभी बच्चे आगे बढ़ गए।
दादाजी, हमलोग गाड़ी में धक्के लगाते हैं।
धन्यवाद बच्चों!
फिर गाड़ी स्टार्ट हो गई।
धन्यवाद बच्चों! चलो, तुमलोगों को इंडिया गेट छोड़ देता हूं।
और फिर...
मजा आ गया!
अरे, राम और नताशा हमलोगों से आगे कैसे पहुंच गए!

भारत का तूफानी संन्यासी

– कुमुद कुमार

स्थान– अमेरिका के शिकागो शहर का कला संकाय का भीड़ से खचाखच भरा विशाल सभागार।

दिवस– १५ सितम्बर १८९३

अवसर– धर्म संसद का दूसरा दिन (सत्र)

उस दिन अनेक धर्मों के धर्मगुरु अपनी–अपनी धार्मिक वेशभूषा में मंच पर आसीन थे। लेकिन सबकी दृष्टि गेरुए वस्त्रधारी एक भारतीय युवा संन्यासी पर टिकी थी।

इस युवा संन्यासी ने धर्म संसद के पहले ही दिन अर्थात ११ सितम्बर १८९३ को अमेरिकन वासियों को 'भाई–बहन!' संबोधित करके उनका हृदय जीत लिया था। इस पर वह सभागार २ मिनिट तक तालियों की गड़गड़ाहट से गूँजता रहा था।

आज सभी उस युवा भारतीय संन्यासी को सुनने के लिए पलक–पावड़े बिछाए बैठे थे। वह युवा संन्यासी कोई और नहीं बल्कि 'चक्रवाती तूफान' के समान उस धर्म संसद को हिला देने वाले प्रखर ओजस्वी वक्ता 'स्वामी विवेकानन्द' थे।

सबको प्रतीक्षा थी कि दासता की बेड़ियों में जकड़े भारतवर्ष का यह युवा संन्यासी आज क्या कहेगा? लेकिन विवेकानन्द तो सभागार को एक ऐसी कहानी सुना रहे थे जैसे कोई दादी माँ अपने पोते को सुनाती है लेकिन इसके माध्यम से वे पूरी दुनिया को एक महान संदेश दे रहे थे।

उस दिन उन्होंने अपनी बात इस प्रकार शुरू की– ''सभागार में उपस्थित भाइयो–बहनो! मैं तुम्हें एक कहानी सुनाऊँगा। अभी–अभी एक वक्ता ने कहा कि हमें एक–दूसरे के धर्म की आलोचना बंद कर देनी चाहिए और उन्हें यह भी दुःख था कि एक–दूसरे के धर्म को लेकर इतने मतभेद क्यों हैं? आइये, अपनी कहानी के माध्यम से आपको बताता हूँ कि ऐसा क्यों है?''

स्वामी विवेकानन्द की सुनाई कहानी इस प्रकार थी–

एक मेंढक बहुत लंबे समय से एक कुएं में रहता था। वह मेंढक उसी कुएं में पैदा हुआ था और वहीं पला–बढ़ा था।

एक दिन समुद्र में रहने वाला मेंढक उस कुएं पर आया और दुर्भाग्य से उस कुएं में गिर गया।

तब कुएं वाले मेंढक ने उससे पूछा– ''अरे भाई, तुम कहाँ से आये हो?''

''मैं तो समुद्र से आया हूँ।'' समुद्र वाले मेंढक ने शालीनता से कहा।

''अच्छा, समुद्र से आये हो। कितना बड़ा होता है समुद्र? क्या यह मेरे इस कुएं के जितना बड़ा होता है।'' कुएं के मेंढक ने कुएं के एक किनारे से दूसरे किनारे तक छलांग लगाते हुए पूछा।

तब समुद्री मेंढक ने कहा– ''मेरे भाई! तुम समुद्र की तुलना अपने कुएं से कैसे कर सकते हो?''

तब कुएं के मेंढक ने और बड़ी छलांग लगाते हुए कहा– ''अच्छा तो तुम्हारा समुद्र इतना बड़ा होता होगा।''

''अरे भाई! तुम कैसी बच्चों सी बातें कर रहे हो, भला समुद्र की तुलना कुएं से कैसे की जा सकती है?''

तब कुएं के मेंढक ने नाराज होते हुए कहा– ''तब ठीक है। मैं कहता हूँ कि मेरे कुएं से बड़ा कुछ हो ही नहीं सकता। इसलिए तुम मेरे कुएं से निकल जाओ।''

यह कहानी सुनाकर स्वामी विवेकानन्द ने कहा– ''तो मित्रो! यही हमारी सबसे बड़ी समस्या है। सभी धर्मों के लोग अपने–अपने धर्मों में सिमटे हुए उसे महान बता रहे हैं।''

इस प्रकार स्वामी विवेकानन्द ने बिना किसी धर्म की आलोचना किए एक बहुत बड़ी समस्या का निदान सभी धर्मावलंबियों को बता दिया। उनका संदेश था कि समस्या की जड़ कुएं के मेंढक की तरह छोटी सोच रखने की है। इसका परित्याग करना ही होगा।

ऐसे महान विचारक और भारत की धर्म–ध्वजा

विश्व में लहराने वाले स्वामी विवेकानन्द का जन्म १२ जनवरी १८६३ को कोलकाता में हुआ था। उनके पिता का नाम विश्वनाथ दत्त और माता का नाम भुवनेश्वरी देवी था। वैसे तो स्वामी विवेकानन्द के बचपन का नाम नरेन्द्र दत्त था लेकिन इन्हें सब प्यार से 'नरेन' कहकर बुलाते थे।

स्वामी विवेकानन्द ने विद्यार्थी जीवन में ही मिल, कांट, स्पेन्सर, हीगल, स्पिनोजा, देस्कार्त, हयूम, प्लेटो, अरस्तू, डार्विन, शोपेनहावर जैसे महान पश्चिमी दार्शनिकों को पढ़ लिया था। दार्शनिक और वैज्ञानिक अध्ययन के कारण ईश्वर में विवेकानन्द का विश्वास समाप्त हो गया था और बहुत समय तक वे नास्तिक बने रहे।

लेकिन उनके गुरु रामकृष्ण परमहंस ने यह कहकर– ''नरेन! मैंने ईश्वर को ऐसे ही देखा है जैसे तुम्हें देखता हूँ। उससे ऐसे ही बातें करता हूँ जैसे तुमसे करता हूँ।'' उनकी ईश्वर के प्रति आस्था फिर से जाग्रत कर दी।

फिर अपने गुरु की आज्ञा से वे भारत भ्रमण पर निकल गए और दीन–दुखियों की सेवा में लग गए। नरेन्द्र दत्त ने १८८६ में औपचारिक रूप से संन्यास ग्रहण किया और वे संन्यासी स्वामी विवेकानन्द हो गए।

स्वामी विवेकानन्द के जीवन की सबसे बड़ी घटना १८९३ में शिकागो विश्व–धर्म सम्मेलन में भाग लेना थी। वे ३१ मई १८९३ को पानी के जहाज से भारत से अमेरिका के लिए प्रस्थान किया। चीन, जापान और कनाडा होते हुए स्वामी विवेकानन्द ३१ जुलाई १८९३ को शिकागो पहुँचे। सम्मेलन में भाग लेने तक की अनेक रोमांचकारी घटनाएँ उनकी यात्रा से जुड़ी हुई है जिन्हें हर सुधि पाठक को जाननी चाहिए।

वैसे तो शिकागो धर्म सम्मेलन अनेक सत्रों के साथ ११ सितम्बर से शुरु होकर २७ सितंबर १८९३ तक चला। किन्तु स्वामी विवेकानन्द का सबसे महत्वपूर्ण संबोधन १९ सितम्बर १८९३ को हुआ जिसमें उन्होंने 'हिन्दुत्व' पर अपने विचार रखे और

हिन्दू धर्म की उदारता पर अपना प्रवचन दिया।

धर्म संसद के उपरांत दुनियाभर में 'स्वामी विवेकानन्द' एक जाना पहचाना नाम हो गया और वे धर्म संसद के 'महानतम व्यक्तित्व' बनकर उभरे। समाचार–पत्रों में उन्हें **भारत का तूफानी संन्यासी** बताया।

अमेरिका और यूरोप के अनेक देशों की यात्रा १५ जनवरी १८९७ को समाप्त कर वे अपनी मातृभूमि भारत वापस लौट आए।

स्वामी विवेकानन्द का कहना था– **''दीन दुखियों में ईश्वर का वास होता है, उनकी सेवा करना ही सबसे बड़ा धर्म है।''**

सेवा कार्य हेतु स्वामी विवेकानन्द ने 'रामकृष्ण सेवा मिशन' की स्थापना की। इसके बड़े केन्द्र कोलकाता में बेलूर मठ और अल्मोड़ा में 'मायावती हिमालयराज' है। उन्होंने 'माई मास्टर', 'ज्ञानयोग', 'राजयोग', 'भक्तियोग' और 'कर्मयोग' जैसे महान ग्रंथ भी लिखें।

उन्होंने कमजोरी को सबसे बड़ा पाप कहते हुए अपने देशवासियों से इसे त्यागने का आह्वान करते हुए कहा था– 'उठो! जागो! लक्ष्य प्राप्ति तक मत रुको।'

भारत माता के इस महान सपूत ने मात्र ३९ वर्ष की अवस्था में ४ जुलाई १९०२ को अपनी देह त्याग दी।

– बिजनौर (उ. प्र.)

कैप्टन दामोदर काशीनाथ जतार

११ अप्रैल १९५५ एयर इण्डिया का लाकहीड विज्ञान एल. ७४९ 'कश्मीर प्रिंसेस' नामक इस हवाई जहाज के कप्तान थे दामोदर। पूरा नाम कैप्टन दामोदर काशीनाथ जतार। विमान को मुंबई और हाँगकाँग की धरती को छोड़ दिया। उस समय उसमें सवार थे कुछ चीनी कुछ यूरोपीय प्रतिनिधि, पत्रकार सभी जकार्ता में होने वाले एशिया-अफ्रो बांडुंग सम्मेलन में सम्मिलित होने जा रहे थे।

धरती से ५५०० मीटर ऊपर विमान के स्टारबोर्ड व्हील वेल में विस्फोट हो गया और आग की लपटें उठने लगीं। विमान का दायां हिस्सा उसकी लपेट में आने लगा।

सारे विमान में धुँआ भर गया। उस स्थान से कम से कम १६५ कि. मी. तक कोई ऐसा मैदान नहीं था कि विमान को आपात स्थिति में उतारा जा सके। इंजन चल रहे थे विमान जल रहा था। विमान से भेजे आपात संकेत भी विफल रहे। समुद्र में विमान उतार देना एक विकल्प था पर केबिन सर्किट की स्थिति ऐसा करने के अनुकूल न बची थी। काटपिट में धुँआ ही धुँआ अंतिम विकल्प लाइफ जैकेट से सवारियाँ को उतारना पड़ा। स्टाटबोर्ड का एक भाग पानी में गिरा और बिमान के तीन टुकड़े हो गए। बचे केवल फ्लाइट इंजीनियर, नेवीगेटर व फर्स्ट आफिसर शेष १६ समुद्र के ग्रास बन गए।

कैप्टन दामोदर भी न बच सके लेकिन उनकी तात्कालिक बुद्धिमत्ता, सूझ व साहस अद्‌भुत सिद्ध हुए। १० जनवरी १९१४ को बुलढाणा (महाराष्ट्र) में जन्मा इस वायुवीर १९३५ में पहली बार विमान उड़ाया था वे १९३७ में टाटा एयर लाईंस में आ गए। फिर एयर इंडिया कारपोरेशन जिसका यह विमान था। मरणोपरांत उनकी बहादुरी को अशोकचक्र से सम्मानित किया गया।

समाचार

श्री जगदीश गुप्त की 'वाह जलेबी' लोकार्पित

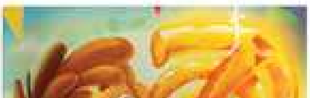

लखनऊ। प्रसिद्ध बाल साहित्यकार श्रीमती नीलम राकेश द्वारा संचालित 'साहित्यांजलि : तेरा तुझको अर्पण' के गरिमामय तरंग मंच पर दिनांक २४ नवम्बर २०२१ को स्व. श्री जगदीश गुप्त का बाल कविता संग्रह **'वाह जलेबी'** लोकार्पित हुआ। समारोह की अध्यक्षता डॉ. विकास दवे (निदेशक साहित्य अकादमी मध्य प्रदेश) ने की। वरिष्ठ साहित्यकार श्री. राकेश चन्द्रा (लखनऊ) एवं देवपुत्र के कार्यकारी संपादक श्री गोपाल माहेश्वरी (इन्दौर) ने पुस्तक पर अपनी समीक्षा प्रस्तुत की। मुख्य अतिथि श्री. प्रकाश तातेड़ (उदयपुर) ने अपने सारगर्भित विचार प्रस्तुत किए। डॉ. सुधा गुप्ता 'अमृता' द्वारा संपादित इस कृति पर म. प्र. के मुख्यमंत्री मा. शिवराज सिंह चौहान, प. पू. महामण्डलेश्वर स्वामी अखिलेश्वरानंद जी गिरी एवं अनेक सुधी साहित्यकारों का लिखित एवं विडियो संदेश भी वाचन किया गया। बाल साहित्य जगत की अनेक प्रख्यात विभूतियों ने इस तरंग मंच पर सहभागिता की।

सरल विज्ञान

प्रस्तुति- **संकेत**

क्या तुम्हें पता है तुम्हारे दांतों को प्लॉक सबसे ज्यादा हानि पहुंचाते हैं. क्या तुम इन्हें देखना चाहते हो? इसके लिए तुम्हें दवाई की दुकान से या डेंटिस्ट (दांतों के डॉक्टर)से डिसक्लोजिंग टेबलेट लानी होगी. ये स्वाद में बुरी नहीं होती डेंटिस्ट भी मुंह में प्लॉक की स्थिति देखने के लिए इसका इस्तेमाल करते हैं...

अब एक टेबलेट खाओ इसके खाते ही करीब 30 सैकंड में तुम्हारी मुस्कान डरावनी लाल हो जाएगी..

चक्कर खा गए?
तुम्हारे मुंह में मौजूद लाल धब्बे प्लॉक हैं... ये बताते हैं तुम्हारी ब्रश, पेस्ट करते समय यहां तक अच्छी तरह नहीं जाती...

धबराने की बात नहीं अब दांतो को ध्यान से ब्रश कर लें ये सब तुरंत गायब हो जाएंगे.

बच्चों के अनूठे कवि : सोहनलाल द्विवेदी

प्रस्तोता – डॉ. नागेश पांडेय 'संजय'

प्यारे बच्चो! **पर्वत कहता शीश उठाकर, तुम भी ऊँचे बन जाओ। सागर कहता है लहराकर, मन में गहराई लाओ।** जैसी अनेक अमर बाल कविताओं के रचयिता राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी (४ मार्च १९०६–१ मार्च १९८८) का जन्म उत्तर प्रदेश के फतेहपुर जिले के बिन्दकी कसबे में हुआ था।

वे मूलतः राष्ट्रवादी कवि थे अपने देश और स्वदेशी वस्तुओं से बहुत प्यार करते थे। खादी की टोपी और अचकन तो उनका प्रिय पहनावा था। उनके ऊपर लिखी गई यह कविता तो उस समय के बच्चों में बहुत लोकप्रिय थी– पंडित सोहनलाल द्विवेदी, किसने तुमको टोपी दे दी? किसने तुमको अचकन दे दी? द्विवेदी जी ने एम. ए., एल. एल. बी. की उच्च शिक्षा प्राप्त की। वे १९५७ से १९६७ तक बाल सखा जैसी लोकप्रिय बाल पत्रिका के संयुक्त सम्पादक भी रहे।

सोहनलाल द्विवेदी जी ने बड़ों के साथ–साथ आप बच्चों के लिए भी खूब लिखा उनकी प्रमुख बाल पुस्तकें हैं– 'बाँसुरी', 'बिगुल', 'गीत भारती', 'बाल भारती', 'शिशु भारती', 'हम बालवीर', 'बाल सिपाही', 'हुआ सबेरा, उठो उठो', 'दूध–बतासा', 'हँसो हँसाओ', 'शिशुगीत', 'बच्चों के बापू' और 'रामू की बिल्ली'।

द्विवेदी जी की पहली बाल कविता १९२१ में शिशु में छपी थी उनकी बाल कविताएँ पढ़कर मन प्रेरणा से भर उठता है सीख भी मिलती है और मनोरंजन भी होता है। विचित्र संयोग है कि उनकी अनेक कविताएँ अन्य कवियों के नाम से लोकप्रिय हुईं साथ ही बहुत से रचनाकारों ने उनकी कविताओं को फेरबदल कर अपने नाम से भी प्रकाशित करा लिया। हम यहाँ पर आपके लिए उनकी कुछ अनूठी बाल कविताएँ प्रस्तुत कर रहे हैं–

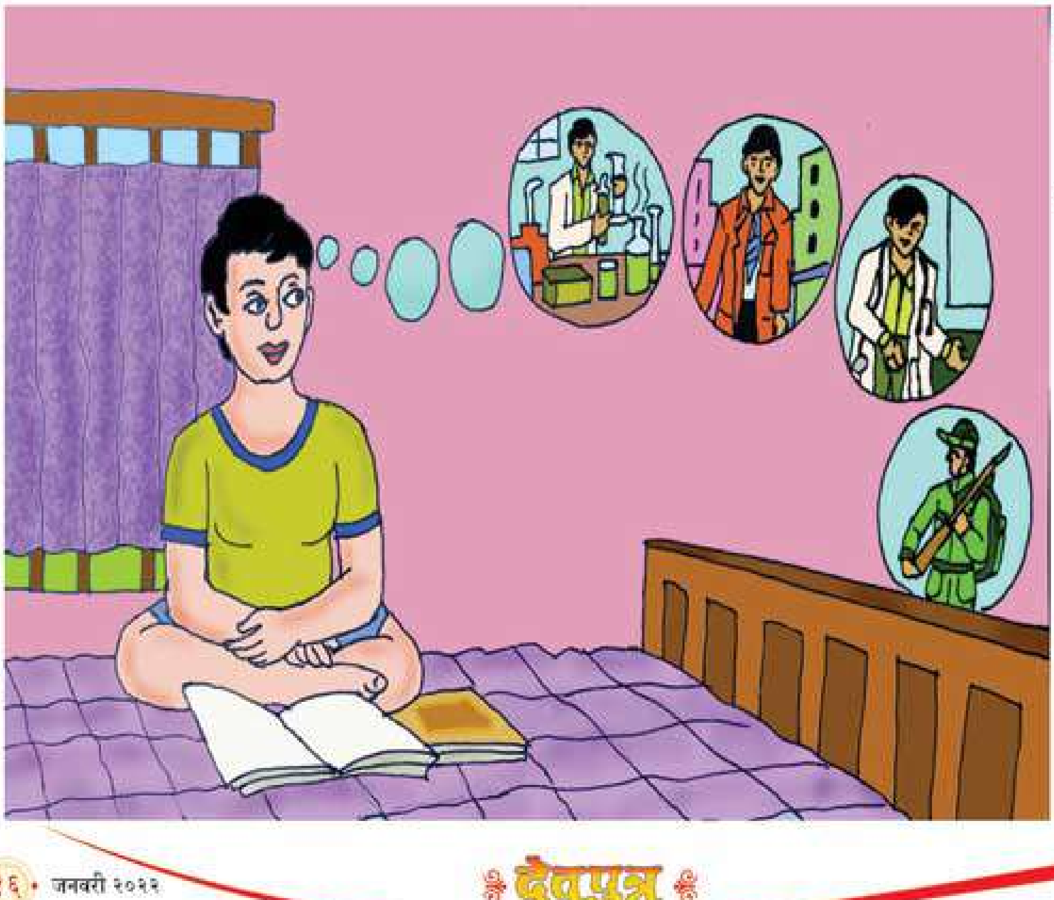

मैं क्या चाहता हूँ?

अम्मा कहती, बनूँ कलक्टर,
दादा कहते, जज बन जाऊँ।
दीदी कहती, बनूँ गवर्नर,
सबके ऊपर हुक्म चलाऊँ।
चाची कहती, बनूँ प्रोफेसर,
चाचा कहते, होऊँ ज्ञानी।
बहन कह रही, बनूँ डॉक्टर,
या कि बनूँ कोई विज्ञानी।
मैं चाहता, देश की सेवा
का बन जाऊँ एक सिपाही।
दुख में माँ की लाज बचा लूँ
तो फिर पूरी हो मन चाही।

कौन सिखाता?

कौन सिखाता है चिड़ियों को,
चीं–ची, चीं–चीं करना?
कौन सिखाता फुदक–फुदककर,
उनको चलना–फिरना?
कौन सिखाता फुर से उड़ना,
दाने चुग–चुग खाना?
कौन सिखाता तिनके ला–
ला कर घोंसले बनाना?
कौन सिखाता है बच्चों का,
लालन–पालन उनको?
माँ का प्यार, दुलार, चौकसी,
कौन सिखाता उनको?
कुदरत का यह खेल, वह हम सबको,
सब कुछ देती।
किन्तु नहीं बदले में हमसे,
वह कुछ भी है लेती।
हम सब उसके अंश कि
जैसे तरू–पशु–पक्षी सारे।
हम सब उसके वंशज,
जैसे सूरज–चाँद–सितारे

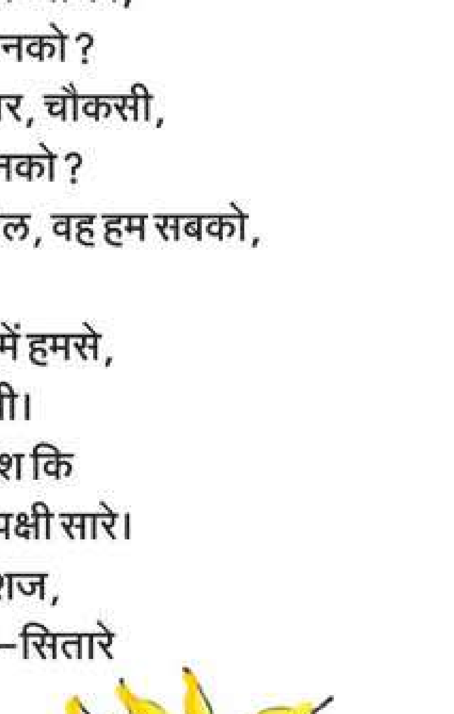

हार नहीं होती

लहरों से डर कर नौका पार नहीं होती,
कोशिश करने वालों की हार नहीं होती
नन्हीं चींटी जब दाना लेकर चलती है,
चढ़ती दीवारों पर, सौ बार फिसलती है।
मन का विश्वास रगों में साहस भरता है,
चढ़कर गिरना, गिरकर चढ़ना न अखरता है।
आखिर उसकी मेहनत बेकार नहीं होती,
कोशिश करने वालों की हार नहीं होती।
डुबकियाँ सिंधु में गोताखोर लगाता है,
जा जाकर खाली हाथ लौटकर आता है।
मिलते नहीं सहज ही मोती गहरे पानी में,
बढ़ता दुगना उत्साह इसी हैरानी में।
मुट्ठी उसकी खाली हर बार नहीं होती,
कोशिश करने वालों की हार नहीं होती।
असफलता एक चुनौती है, स्वीकार करो,
क्या कमी रह गई, देखो और सुधार करो।
जब तक न सफल हो, नींद चैन को त्यागो तुम,
संघर्ष का मैदान छोड़ मत भागो तुम।
कुछ किए बिना ही जय–जयकार नहीं होती,
कोशिश करने वालों की हार नहीं होती।

एक किरण आई

एक किरण आई छाई, दुनिया में ज्योति निराली।
रंगी सुनहरे रंग में, पत्ती–पत्ती डाली–डाली।
एक किरण आई लाई, पूरब में सुखद सवेरा,
हुई दिशाएँ लाल– लाल हो गया धरा का घेरा।
एक किरण आई हँस–हँसकर, फूल लगे मुस्काने।
बही सुगंधित पवन, गा रहे भौंरे मीठे गाने।
एक किरण बन तुम भी, फैला दो दुनिया में जीवन।
चमक उठे सुन्दर प्रकाश से, इस धरती का कण कण।

– शाहजहाँपुर (उ. प्र.)

पतंग का संदेश

– अनिल अग्रवाल

धड़ाम की आवाज सुनकर माँ चौंक गई ''अरे बेटा यह तुमने क्या किया?'' माँ ने रसोईघर से आवाज लगाई। दरअसल माँ ने रोहन को फ्रीज से टमाटर निकालने का कहा था। रोहन टमाटर निकाल कर उछलते हुए उनसे खेलने लगा और इस खेल में उसके हाथ से दो टमाटर जमीन पर गिर गए। फर्श गंदा हो गया, साथ ही रोहन फिसल भी गया।

माँ को जैसे ही पता चला उन्होंने रोहन की खूब खिंचाई की ''दिन भर मस्ती करते रहते हो कुछ भी काम कहो बस उसको खेल ही खेल समझते हो। पता है तुमको टमाटर कितने महँगे हैं?''

''क्षमा करें माँ! मैंने तो बस यूँ ही जग्लिंग करने के लिए टमाटरों को उछाला था वह गलती से गिर गए और मैं भी...।'' रोहन ने माँ को सफाई देने का प्रयास किया परंतु माँ कहाँ मानने वाली थी। ''चलो जाओ और फर्श को साफ करो।'' उन्होंने अपना आदेश सुनाया।

फर्श साफ कर रोहन पढ़ने बैठ गया। कुछ समय पश्चात जब उसका गृहकार्य पूरा हो गया तो उसने मैदान में खेलने जाने का मन बनाया। उसी समय माँ ने आवाज लगाई– ''अरे रोहन! तुम क्या कर रहे हो?'' मेरा गृहकार्य हो गया। सोच रहा था सामने मैदान में खेलने चला जाऊँ।''

''अरे! नहीं–नहीं, अभी नहीं अभी जाकर छत से सूखे कपड़े उठा लाओ।'' माँ ने उसे एक नया काम बता दिया। ''पर माँ...!'' रोहन कुछ कहना चाहा। माँ ने बीच में ही टोकते हुए कहा– ''बड़े हो गए हो कुछ घर का काम भी किया करो। दिनभर खेल–खेल यह क्या लगा रखा है?''

रोहन उदास सा हो गया उसे लगने लगा कि उसके जीवन में अब पढ़ाई और काम के सिवा कुछ भी नहीं। जैसे–तैसे वह कपड़े उठाकर नीचे पहुँचा तो माँ ने उन कपड़ों को घड़ी करके रखने के लिए कह दिया, रोहन मन मसोसकर घर के काम करता रहा। पूरा काम करने के बाद जब रोहन ने खेलने जाने की इच्छा जताई तब माँ ने उसे कहा– ''नहीं, शाम हो गई है ठंड पड़ रही है, तुम बीमार हो जाओगे।'' रोहन मुँह लटका कर अपने कमरे में जाकर बैठ गया उसकी मासूमियत, उसका बचपन धीरे–धीरे गुम होता जा रहा था। कोई इस बात को समझ नहीं पा रहा था।

माता–पिता उसे समझने के स्थान पर जबरदस्ती बड़ा व जिम्मेदार बनाने पर तुले हुए थे।

संध्या को रोहन टीवी पर कार्टून देखते–देखते इतना तल्लीन हो गया कि सोफे पर ही उचकने–कूदने लगा। पास ही बैठे उसके पिताजी चिल्ला उठे– ''यह क्या धमाचौकड़ी मचा रखी है? सीधे से बैठकर कार्टून नहीं देख सकते और दिनभर कार्टून ही क्यों देखते रहते हो? कुछ विज्ञान या सामान्य ज्ञान देखा करो।'' पर पिताजी! अभी तो मैं छोटा बच्चा हूँ.. मुझे कार्टून पसंद....'' रोहन अपनी ओर कुछ कहना चाहा पर पिताजी बीच में ही बोल उठे– ''तुम्हारी

बराबरी के बच्चे देखो टीवी पर कार्यक्रम कर रहे हैं, गाना गा रहे हैं। पास वाले शर्मा जी का बेटा तो अभी से कहता है कि वह फाइटर पायलट बनेगा। वर्माजी की बेटी डॉक्टर बनना चाहती है जबकि वह तो अभी केवल चौथी कक्षा में ही है, एक तुम हो जो कह रहे हो कि अभी बच्चे हो।''

''हाँ बेटा! तुम्हारे पिताजी सही कह रहे हैं, तुम्हें अभी से अपने कैरियर के बारे में सोचना चाहिए।'' माँ ने भी पिताजी की बात से सहमति जताते हुए कहा। रोहन उदास होकर बोला- ''पर माँ! मैं तो अभी सातवीं कक्षा में तो हूँ। मैं अभी खेलना चाहता हूँ, पतंग उड़ाना चाहता हूँ, मैदानों में दौड़ना चाहता हूँ, जग्लिंग करना चाहता हूँ, ड्राईंग करता चाहता हूँ।''

''अरे बेटा! बस करो, देख ली मैंने तुम्हारी जग्लिंग तीन टमाटर तो सही से उठा नहीं पाए बड़े जग्लिंग करोगे।'' माँ ने रोहन की बात बीच में ही काटते हुए कहा। ''अरे बेटा! अब यह बचपना छोड़ो और कुछ बड़ा बनने की सोचो।'' पिताजी ने उसे पुन: समझाया।

रोहन अब सहमा-सहमा सा रहने लगा। उसे

ड्राईंग बनाना पसंद था पर वह जब भी कुछ बनाने बैठता मातापिता उसे टोक देते, उनकी आकांक्षाओं के तले रोहन का बचपन खिलने से पहले ही मुरझा-सा गया था।

रोहन को रह-रहकर अपने दादाजी की याद आने लगी उसके दादाजी दो-तीन महीने में एक बार अवश्य शहर आते थे। पर कोरोना के कारण लगभग वर्ष भर से रोहन अपने दादाजी से नहीं मिल पाया था।

उस दिन जब रोहन को उसकी माँ ने बताया कि दादाजी मकर संक्रांति पर कुछ दिनों के लिए शहर आ रहे हैं तो रोहन का चेहरा खिल उठा वह बेसब्री से मकर संक्रांति के आने की प्रतीक्षा करने लगा।

मकर संक्रांति के एक दिन पहले जैसे ही रोहन के पिताजी, दादाजी को स्टेशन से लेकर घर पहुँचे रोहन अपने दादाजी की ओर लपका। दादाजी दूर से ही उसे कहते हैं- ''अरे भाई रोहन! रुको। अभी हम दूर से आए हैं पहले हाथ-मुँह धो लें फिर आपके साथ खूब खेलेंगे।'' सच दादाजी खेलने की बात सुनकर रोहन का चेहरा खिल उठा। हाथ मुँह धोकर जैसे ही दादाजी ने रोहन को अपने गले से लगाया रोहन फूट-फूटकर रोने लगा।

दादाजी समझ गए कि कुछ ना कुछ गड़बड़ है। दादाजी ने प्यार से उसके सिर पर हाथ फेरकर उसे चुप कराया और बोले- ''बेटा! तू चिंता मत कर अब मैं आ गया हूँ, अब हम दोनों मिलकर धमाल करेंगे।'' ''सच दादाजी! आप मेरे साथ मिलकर धमाल करेंगे?'' ''हाँ क्यों नहीं? बचपन और पचपन जब मिल जाएँ तो धमाल तो होना तय है।'' दादाजी ने हँसते हुए कहा।

रोहन ने दादाजी के साथ ही खाना खाया। शाम को दादाजी घूमने जाने के लिए तैयार हुए तो उन्होंने रोहन को आवाज लगाई- ''रोहन चलो बेटा! अपने दादाजी के साथ घूमने नहीं चलोगे?'' रोहन मारे प्रसन्नता से उछलता हुआ दादाजी के पास आ गया।

''हुर्रेऽऽ! अब तो मजा आएगा।'' घूमते-घूमते दादाजी ने रोहन से उसकी परेशानी का कारण पूछा- ''क्या हुआ बेटा! रोहन तुम इतने उदास क्यों रहते हो ?'' रोहन ने रोते-रोते दादाजी को सारी बात बता दी।

''अच्छा तो यह बात है तुम्हारे माता-पिता तुमसे तुम्हारा बचपन छीनना चाहते हैं, पर इसमें उनकी कोई गलती नहीं बेटा! वे तुम्हारे भविष्य के प्रति आवश्यकता से अधिक चिंचित हैं। तुम चिंता मत करो मैं उन्हें समझा दूँगा।''

कुछ सोचकर पास की दुकान से दादाजी ने पतंग और मांझा खरीदा। रोहन पे पूछा- ''यह किस लिए दादाजी ?'' दादाजी ने समझाया- ''बेटा कल मकर संक्रांति है, सूर्य देव उत्तरायण होते हैं। इस दिन तिल और गुड़ का दान किया जाता है। दादी ने तुम्हारे लिए तिल के लड्डू भी भेजे हैं। इस दिन पतंग उड़ाकर खुशी मनाई जाती है।'' ''तो क्या दादाजी! हम भी पतंग उड़ाएँगें ? रोहन ने जिज्ञासा प्रकट की। ''हाँ-हाँ बिल्कुल उड़ाएँगे।'' ''आप सचमुच महान हो दादाजी। पतंग उड़ाएँगे और दादी के हाथ के बने तिल के लड्डू भी खाएँगे।'' रोहन की खुशी का कोई ठिकाना न था।

अगले दिन दादाजी रोहन और उसके माता-पिता को लेकर छत पर पहुँचे पतंग डोर से बाँधकर उन्होंने एक ओर रख दी और रोहन के माता-पिता से कहने लगे इस पतंग को यदि उड़ाएँगे तो कट जाने का डर है।'' रोहन के पिता आश्चर्य से कहने लगे- ''पर बाबूजी! जब तक पतंग उड़ाएँगे नहीं पतंग के उड़ने का आनंद कैसे आएगा ?'' ''हाँ बाबूजी! पतंग भले ही कट जाए लेकिन पतंग की सार्थकता तो खुले आकाश में उड़ने से ही है।'' रोहन की माँ ने भी समझदारी भरी बातें कही।

दादाजी समझाते हुए बोले- ''वहीं तो मैं बताना चाहता हूँ। पतंग का धरती पर कोई अस्तित्व नहीं है, उसे तो खुला आसमान चाहिए। पतंग को उड़ाना पड़ता है, ढील देनी पड़ती है, कभी खींचना भी पड़ता है। फिर वह नीले आकाश में गोते लगाती, ऊँचाई पर पहुँचती है और शिखर को छूती है। ठीक इसी प्रकार बच्चों को भी खुला आसमान चाहिए, प्यार चाहिए, दुलार चाहिए। तुम बताओ क्या तुमने अपने बचपन में शरारतें नहीं की थी ? गलतियाँ नहीं की थी ? बच्चा यदि गलती करता है तो उसे प्यार से समझाना चाहिए। उस पर अपनी आकांक्षाओं का बोझ लादना उचित नहीं।''

''पर बाबूजी! रोहन अब बड़ा हो रहा है।'' रोहन के पिताजी ने अपनी चिंता बताई। दादाजी बोले- ''बच्चे को समय से पहले बड़ा बनाने में कोई लाभ नहीं। बचपन तो मासूमियत, सरलता, नटखटपन का ही नाम है। यदि बच्चे शरारत नहीं करेंगे तो क्या हम बड़े करेंगे ?

''बाबूजी! पढ़ाई भी तो आवश्यक है।'' माँ ने चिंतित स्वर में कहा। ''हाँ-हाँ बहू! मैं कहाँ मना कर रहा हूँ कि पढ़ाई आवश्यक नहीं है किन्तु हमें बच्चों के सब प्रकार से विकास पर ध्यान देना चाहिए। यदि किसी पतंग को मोटे कागज से बनाएँगे तो वह पतंग इतनी भारी हो जाएँगी कि वह कभी आसमान में नहीं उड़ पाएँगी।''

दादाजी की बातें सुनकर रोहन के माँ-पिताजी को अपनी गलती का अनुभव हो चुका था। उन्होंने दादाजी से क्षमा माँगी और रोहन को गले से लगा लिया। रोहन के पिताजी बोले- ''बाबूजी! अब हम पतंग के संदेश को समझ चुके हैं।'' रोहन खुशी से कहने लगा दादाजी अब तो पतंग उड़ाओ नीले-नीले आसमान में मेरी यह हरी-पीली पतंग लहराती कितनी सुन्दर दिखेगी।'' दादाजी ने झट से मांझा बांधा और पतंग उड़ाने लगे। कुछ ही देर में रोहन की पतंग अकाश से बातें करने लगी।

- भोपाल (म. प्र.)

नहीं भूला
चित्रकथा-
ए मालूराम, ए सुनो..
अरे बाप रे..
कहां भाग रहे हो?
..ये पकड़ा तुझे... ..क्यों बे मालू...
ओह !..
लगता है तुम मुझसे लिए कर्ज़ को बिल्कुल भूल गए हो..
नहीं भाई, अगर भूल जाता तो तुम्हें देख बचकर भागने की क्या जरूरत पड़ती.?

आओ बच्चो!

आओ बच्चो! तुम्हें सुनाएँ,
इस धरती को नमन करो,

उत्तर में नगराज कर रहा, है रखवाली देश की।
उदधि उर्मियाँ पग पखारती, गौरवशाली देश की।।
स्वर्ग लोक से बढ़कर है, सुन्दरता अपने देश की।
नदियों की पावन धारा से, सिंचित भूमि स्वदेश की।।
गंगा-यमुना के घाटों पर, धूम मची त्योहारों की।
मस्त भरे मेलों में होती, वर्षा प्रेम फुहारों की।।
इनके तट पर गाथा होती, गीता, वेद, पुराण की।
बार बार यह सुख पाती, माँ बनकर श्री भगवान की।।
आओ बच्चो! तुम्हें सुनाएँ, गाथा.....।।

यह रजपूती शान जिन्होंने, कभी न मानी हार है।
फाग खेलते तलवारों से, जीवन असि की धार है।।
स्वतन्त्रता का दीप जलाया, जिसने अपने प्राणों से।
तन-मन-जीवन वार दिया, राणा ने माँ के चरणों पे।।
अस्सी घाव लगे थे तन में, पर प्राणों का मोह न था।
मातृभूमि की रक्षा के हित, जीवन का सम्मोह न था।।
कूद चिता में रखी लाज थी, बहनों ने सम्मान की।
मर्यादा से कम मानी थी कीमत अपने प्राण की।।
आओ बच्चो! तुम्हें सुनाएँ, गाथा.....।।

तुम्हें सुनाएँ

– विष्णुगुप्त 'विजिगीषु', शाहजहाँपुर

गाथा हिन्दुस्थान की।
यह धरती है बलिदान की।।

गुरु समर्थ की कर्मभूमि यह, वीर शिवाजी खेला था।
अन्यायी ताकत को उसने, तलवारों पे तौला था।।
दूध सिंहनी का लाया था, खेला अपनी जान पर।
घाटी घाटी गूँज उठी थी, वीर शिवा के नाम पर।।
बच्चा बच्चा जाग उठा था, कर में तेग महान थी।
चिड़ियों से मैं बाज लड़ाऊँ,गुरु गोविन्द की आन थी।।
दीवारों में चुने गए थे, मुख पर शान महान थी।
बंदा का बलिदान अनोखा, जय बोलो वीर महान की।।
आओ बच्चो! तुम्हें सुनाएँ, गाथा.....।।

क्षत्राणी दुर्गा रानी ने, अरि दल को ललकारा था।
झाँसी की रानी ने सब कुछ,प्रिय स्वदेश पर वारा था।।
बंकिम, नेताजी सुभाष का, गूँज उठा जयकारा था।
तिलक, गोखले,गांधीजी का, आजादी का नारा था।।
छाती पर गोली खाई थी, जलियाँ वाले बाग में।
कफन ओढ़कर घर से निकले, स्वतंत्रता के फाग में।।
बिस्मिल औ आजाद, भगत ने, आहुति दे दी प्राण की।।
यह माटी चंदन है पावन, वीरों के बलिदान की।।
आओ बच्चो! तुम्हें सुनाएँ, गाथा.....।।

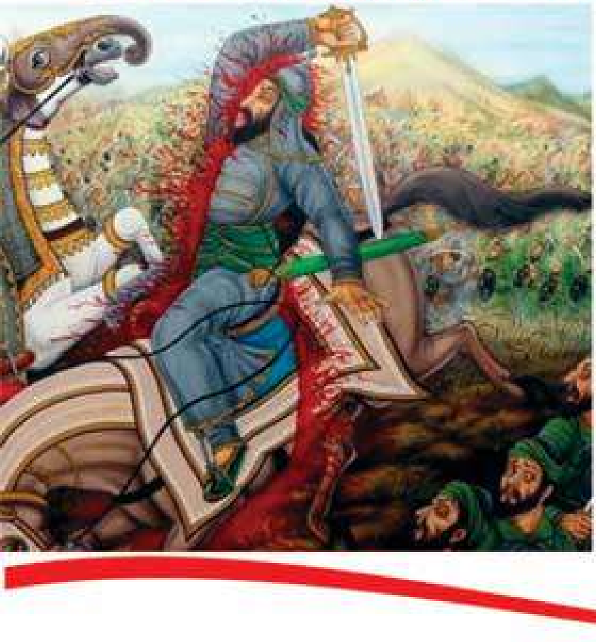

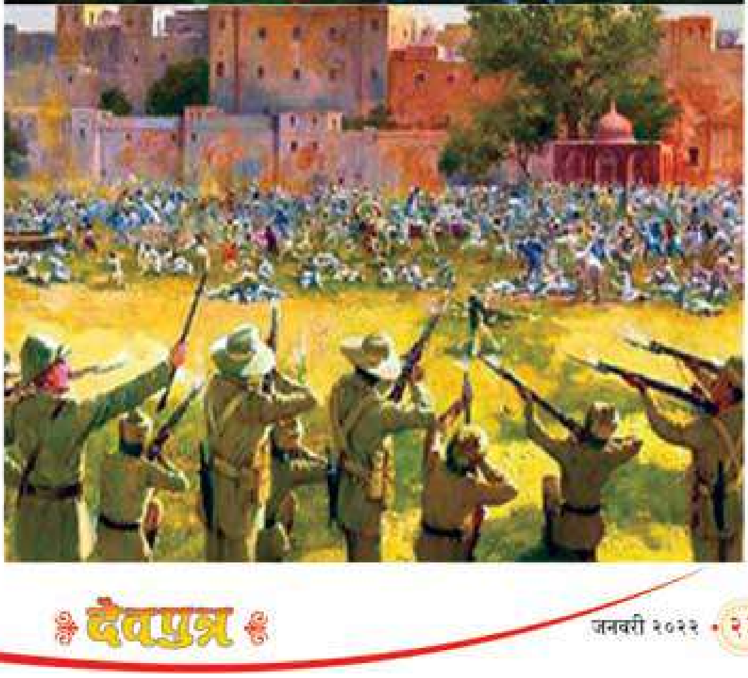

मेरे छोटे मामा

– डॉ. सरोजिनी कुलश्रेष्ठ

मेरी माँ के दो भाई थे। बड़े मामा ने खुशहाल जीवन बिताया था। परन्तु छोटे मामा के भाग्य में न जाने क्या था कि वे एक दूसरी तरह के व्यक्ति बन गए थे। नानाजी चुटियारी के प्रभावी व्यक्तित्व थे परन्तु उनकी मृत्यु के पश्चात सब कुछ गड़बड़ हो गया। ऊँची हवेली गढ़ा हुआ धन द्वार पर खड़ा हुआ रथ सभी कुछ विनाश के कगार पर खड़ा हो गया। मेरे पिताजी स्वास्थ्य अधिकारी थे।

उनका स्थानान्तरण लखीमपुर खीरी में हो गया था। यहाँ वे बड़ी ईमानदारी से स्वास्थ्य अधिकारी के रूप में निष्ठा से काम कर रहे थे। सरकारी कर्मचारी होने के कारण सभी सुविधाएँ उनको प्राप्त थीं।

पूरे जिले में उनकी धाक थी। नानाजी की मृत्यु के बाद पिताजी छोटे मामा को अपने साथ लखीमपुर ले आए थे। उनके प्रभाव से एक प्रतिष्ठित विद्यालय में उनका प्रवेश भी करा दिया था। सब कुछ ठीक–ठाक चल रहा था। मौसी के विवाह में पिताजी को तथा हम सभी को गाँव जाना था। छोटे मामा को विद्यालय से छुट्टी नहीं मिली थी इसलिए वे नहीं जा सके थे। घर में नौकरों की देखरेख में वे अकेले ही रह गए थे।

गाँव में विवाह सकुशल सम्पन्न हो गया। माँ, पिताजी मैं और मेरी बहन लौट आए। जाते समय मेरी माँ ने ऊपर की गौख में चालीस रुपए छिपा कर रख दिए थे। वे उन्हें लेने के लिए चढ़ी तो वहाँ कुछ भी नहीं था। पूरे चालीस रुपए गायब थे। तब मामा पर ही शक हुआ। आखिर उन्हें क्या आवश्यकता पड़ गई कि रुपए चुराने पड़े। पिताजी भ्रष्टाचार के विरुद्ध थे तो मामा से पूछताछ की।

संतोष जनक उत्तर न मिलने पर उनकी सार्वजनिक रूप से पिटाई की गई। माँ ने सोचा पिटाई से भाई सुधर जाएगा इसलिए वे आँसू बहाती हुई चुप ही रही। हम दोनों बहनें जोर–जोर से रो रही थीं ''हाय पिताजी मामाजी को मत मारो मर जाएँगे।'' पर पिताजी पर सरकारी नौकर होने का दबाव था।

ब्रिटिश सरकार उनको भी अपराधी समझेगी देशद्रोह का मुकदमा चला देगी। हम सब रो–रो कर कह रहे थे ''हाय पिताजी! मामा को इतना मत मारो।'' मेरे पिताजी ने जीवन में किसी को भी नहीं पीटा था। हम बहनें तो उनका एक थप्पड़ भी नहीं जानतीं।

पिताजी ब्रिटिश सरकार के दूत बनकर मामा को पीट रहे थे। मामा भी इतने बहादुर कि उन्होंने न हाय की न एक आँसू आँख में आया। वे धीर गंभीर भाव से मार सहते रहे। तथ्य यह था कि मामा इसी कालावधि में क्रांतिकारियों के वश में हो गए थे। वही दृढ़ता उनको यह भीषण मार सहने को विवश कर रही थी।

वस्तुत: मामा ने इस घर में भी अपना प्रभाव दिखा दिया था। वे बड़ी–बड़ी तस्वीरें लाए थे जो केलेन्डर के रूप में थीं। पता नहीं किस कवि की रचना थी कि मोहन (कृष्ण) और मोहनदास (गाँधी) की तुलना की गई थी। बड़े–बड़े फोटो के साथ कृष्ण और गाँधी की कैलेण्डर पर विराजमान थे। शब्द थे–

उठी लेखनी आज फिर लेकर यह अभिमान,
मोहन मोहनदास का करना है गुणगान।
वे प्रकटे कारागृह में थे ये कारागृह के वासी हैं,
वे दूध गाय का पीते थे इनको बकरी का भाया है।

इसी प्रकार यह लम्बी कविता बड़े–बड़े अक्षरों में हमारे घर की दीवारों पर शोभा देती थी। पिताजी का ध्यान इन पर गया नहीं अथवा इसको भक्ति की कविता कहकर टाल दिया, और भी रक्षाबन्धन पर

कविता जो मुझे आज भी याद है एक पोस्टर पर लिखी थी– की बहन माँ से पूछती है–

अम्मा मुझको को जल्द बता दे,
कब आवेगा प्रिय भाई ?
राखी मैं कब बाँधूगी,
रक्षाबन्धन तिथि आई।
सूत कातती हूँ मैं माता,
राखी शीघ्र बना दूँगी।
अगर न आया मेरा भाई,
फिर किसको पहनाऊँगी।

कविता लम्बी है पर मुझे वह याद हो गई थी। एक दिन मामा ने कुछ कंकड़ियाँ नमक की दी और कहा कि– ''यह हीरा है इसको संभालकर रखना। डांडी यात्रा की यादगार है।'' और भी बहुत सी बातें बताकर वे मेरे मन में राष्ट्रीय भावनाएँ जगाया करते थे। मेरी राष्ट्रीय बाल कविताओं पर उसका प्रभाव भी पड़ा था।

उस दिन की पिटाई के बाद मामा की गतिविधियाँ बंद सी लगीं परन्तु अब वे भूमिगत हो गई थीं। स्वदेशी सपूतों के बीच में रहकर वे देशप्रेम की भावना में बह रहे थे। माँ के रुपये भी उन्होंने बम बनाने में खर्च किए थे अत: उसको स्वीकार करना तो असम्भव था। आखिर एक दिन पिताजी मामा को मथुरा पहुँचा आए। विद्यालय छूट गया। पिताजी का वरदहस्त भी नहीं रहा फिर पता नहीं क्या करते रहे। कई जगह बैंक लूटने में भी सम्मलित हुए। चौरी–चौरा कांड की चर्चा चली तो उसमें भी उनकी भागीदारी थी।

जब देश स्वतंत्र हुआ तो अन्य स्वतंत्रता सेनानियों के साथ मामा को भी स्वतंत्रता सेनानी घोषित किया गया तब उनके जीवन की गतिविधियों की पोल खुली वे चालीस रुपये जो अपनी बहन के चुराये थे उन्होंने लखीमपुर में आयोजित संघ की गतिविधियों को समर्पित किए थे। फिर तो पिताजी ने भी उनका सम्मान किया था। माँ की आँखों से खुशी के आँसुओं की झड़ी लग गई थीं।

मेरे इन छोटे मामा ने राष्ट्रीय भावना को इतना जगाया कि हम दोनों बहनें सन् ४२ के आन्दोलन में कूद पड़ीं। उसकी कहानी फिर कभी।

– नोएडा (उ. प्र.)

कांधे पर बहन

– रजनीकांत शुक्ल

स्वप्नाली घर में पानी समाप्त हो गया जरा कुएं से एक बाल्टी पानी तो ले आ– उसकी माँ ने आवाज लगाई। जी आई, अभी लाई। कहकर स्वप्नाली हरि चन्द घाग बाल्टी लेकर पानी लेने के लिए कुएं की ओर चल दी। स्वप्नाली अभी चौदह वर्ष की ही थी। अपने घर में वह माँ के साथ घर के कामों में खूब हाथ बँटाती थी। दुबली–पतली छरहरी स्वप्नाली खूब चंचल थी। घर में बताए गए किसी भी काम के लिए ना नहीं कहती थी। यही कारण था कि उसने तुरन्त बाल्टी उठाई और कुएं की ओर चल पड़ी।

यह महाराष्ट्र राज्य के रत्नागिरि जिले का संगमेश्वर ताल्लुका था जहाँ की घागबाड़ी में उसका घर था। वर्ष २००२ के अप्रैल महीने की उस दिन तेईस तारीख थी। स्वप्नाली अपनी ही धुन में बाल्टी लिए पानी लाने कुएँ की ओर बढ़ी जा रही थी। बिना यह जाने कि उसकी चार वर्ष की छोटी बहन भी पूँछ की तरह उसके पीछे–पीछे लगी चली आ रही है। पीछे कुछ आहट सुनाई दी तो उसने मुड़कर देखा तो चौंक गई। ''अरे! यह तो वैष्णवी है।''

''तुम क्यों मेरे पीछे–पीछे चली आईं?'' स्वप्नाली ने उससे पूछा। ''दीदी! मैं भी चलूँगी पानी लाने तुम्हारे साथ'' वैष्णवी ने भोलेपन से उत्तर दिया। ''चलूँगी? अरे! तुम तो आधे रास्ते तक आ भी चुकी हो।'' स्वप्नाली ने उससे मुस्कुराते हुए कहा। ''जाओ! लौट जाओ वापस।'' स्वप्नाली ने उससे कहा। ''नहीं दीदी! मैं तो चलूँगी।'' वैष्णवी की आँखों में अनुनय की झलक दिखाई दी।

स्वप्नाली ने सोचा कि अब आधे रास्ते तक तो आ ही गई है। ले ही चलते हैं। वह बोली– ''ठीक है चलो।''

''अच्छा दीदी!'' कहते हुए वैष्णवी उछलती–कूदती उसके साथ चल दी।

कुछ ही देर में स्वप्नाली वैष्णवी के साथ कुएं के पास पहुँच गई। स्वप्नाली कुएं के अन्दर डालने के लिए बाल्टी में रस्सी बाँधने लगी। इसी बीच वैष्णवी आगे बढ़ी और कुएं के अन्दर झाँकने लगी। कुएं से पानी निकालने के क्रम में वहाँ पानी गिर जाता था जिसके कारण वहाँ पर कीचड़ हो रहा था। वैष्णवी ने डरते–डरते पैर बढ़ाया तो उसका पैर फिसल गया और वह लड़खड़ाती हुई कुएं के अन्दर जा गिरी।

यह देखकर स्वप्नाली के तो होश ही उड़ गए। उसने बाल्टी छोड़ी और चीखती हुई कुएं की ओर दौड़ी। झाँककर देखा तो पैतीस फुट गहरे उस कुएं में उसे कुछ नहीं दिखाई दिया। उसने कुएं में उतरने का प्रयत्न भी किया किन्तु उसे ध्यान आया कि इस प्रकार धीरे–धीरे उतरने में अधिक देर लगेगी इतनी देर में वैष्णवी तो जीवित नहीं रह पाएगी।

बस उसने एक पल को देखा–समझा और फिर कुएं में छलाँग लगा दी। नीचे पहुँचकर उसने वैष्णवी को पानी में से उठाया और उसे अपने कांधे पर बैठा लिया। वैष्णवी के शरीर में हलचल थी। उसने वैष्णवी को बचा तो लिया था किन्तु बाहर कैसी निकल पाएगी? वह कुआं उसके घर से दूरी पर था और उसके आस–पास भी कोई घर नहीं था। उसने सहायता के लिए चिल्लाने का प्रयास भी किया किन्तु कुएं से बाहर दूर तक आवाज नहीं जा पा रही थी।

अब तो एक ही आशा थी कि कोई पानी भरने आएगा तभी बाहर किसी को सूचना हो सकेगी और उसे निकाला जा सकेगा। तब तक स्वप्नाली को धैर्यपूर्वक ऐसे ही पानी में कांधे पर वैष्णवी को लिए–लिए खड़े रहना था। यह कठिन था। किन्तु इसके सिवा दूसरा कोई विकल्प भी नहीं था।

जब काफी देर तक स्वप्नाली पानी लेकर नहीं लौटी तो माँ को चिंता हुई। उन्होंने चारों ओर देखा तो

उन्हें वैष्णवी भी नहीं दिखाई दी। पन्द्रह–बीस मिनट हो गए अब तक तो स्वप्नाली को आ जाना चाहिए था। कहाँ रह गई ये ? मन ही मन विचार करती हुई उसकी माँ कुएँ की ओर चल दीं।

मेरे सामने ही तो पानी की बाल्टी लेकर गई थी। फिर साथ में वैष्णवी को भी ले गई। कहा था पानी की आवश्यकता है तो जल्दी आना था। अगर कहीं जाना था तो बताकर जाती। तरह–तरह की बातें सोचती हुई स्वप्नाली की माँ कुएं तक जा पहुँची।

जब उन्होंने कुएं पर स्वप्नाली के द्वारा घर से लाई हुई बाल्टी रखी देखी और स्वप्नाली–वैष्णवी को कहीं दूर–दूर तक नहीं पाया तो उनके मन में तरह–तरह की आशंकाएँ जन्म लेने लगीं। उन्होंने दूर से ही जोर–जोर से आवाजें देना शुरू कर दिया।

''हाय! मेरी बेटियाँ कहाँ चली गईं?'' वे घबराने लगीं थीं। इसी घबराहट में उन्होंने डरते–डरते कुएं में भी झाँककर देखा तो नीचे से स्वप्नाली की आवाज सुनाई दी। ''आईऽऽ! मैं यहाँ हूँ।''

''और वैष्णवी ?'' उनका दिल आशंका से दहल रहा था। ''वह भी यहीं है ? सुरक्षित मेरे पास। हमें बाहर निकालो।'' स्वप्नाली ने चिल्लाकर कहा।

स्वप्नाली की माँ अकेले उन दोनों बच्चों को पैंतीस फुट गहरे उस कुएं से नहीं निकाल सकती थी। सो पागलों की तरह शोर मचाती हुई दौड़ीं।

दोपहर का समय था उस समय कई आदमी पास में ही खेतों में काम कर रहे थे। स्वप्नाली की माँ को लगा कि वे उनकी दोनों बेटियों को कुएं से बाहर निकालने में मदद कर सकते हैं। उनकी पुकार सुनकर वे लोग तुरन्त अपना काम छोड़कर दौड़े चले आए।

उन्होंने मिलकर रस्सी के सहारे बड़े बर्तन में बैठाकर उन दोनों को कुएँ से बाहर निकाल लिया। जब तक वे दोनों बाहर नहीं आ गईं उनकी माँ के प्राण अधर में ही लटके रहे।

स्वप्नाली ने उस पैंतीस फुट गहरे कुएं में कूदकर अपनी बहन की जान बचा ली थी। इसके साथ ही लगभग आधे घंटे तक वह अपनी बहन को कांधे पर बैठाए पानी में धैर्यपूर्वक सहायता मिलने की प्रतीक्षा में खड़ी रही। यह सब उस चौदह वर्ष की बच्ची के लिए एक बहुत बड़े साहस की बात थी।

स्वप्नाली वास्तव में बहादुर लड़की थी। उसको वीरता पुरस्कार के लिए चुना गया। वर्ष २००३ में गणतंत्र दिवस के अवसर पर उसे देश के प्रधानमंत्री जी ने वर्ष २००२ के राष्ट्रीय बाल वीरता पुरस्कार को प्रदान कर सम्मानित किया।

नन्हें मित्रो !

मौके हमको, हम मौकों को बार–बार आजमाते।
कभी न चूकें हम ये अवसर, इनको खूब भुनाते।
मुसीबतों से कब डरते हम ? इनसे अपने नाते।
जीवन के मतलब को समझें, झूमें, हँसते गाते।

– दिल्ली

भलाई के पंख

– इंद्रजीत कौशिक

''अरे देखो–देखो, एक परी आई है।'' बच्चों की नजर परी पर पड़ी तो वह खुशी के मारे चीख पड़े।

उनकी चीख सुनकर नीलू परी थोड़ी देर के लिए डर गई। पर वह बच्चों से बहुत प्यार करती थी इसलिए कहीं जाने की बजाए वह उनका स्वागत करने के लिए खड़ी रही।

''बच्चो! कैसे हो तुम सब?'' नीलू परी ने बड़े प्यार से उन बच्चों से पूछा।

''हम तो ठीक हैं परी रानी! पर मजे तो तुम्हारे हैं क्योंकि तुम अपने पंखों के माध्यम से कहीं भी उड़ कर जा सकती हो।'' बच्चे बोले।

''अरे नहीं–नहीं, ऐसी बात नहीं है। बचपन तो मुझे भी बहुत प्यारा लगता है। रही बात पंखों की तो मुझे इनका बहुत ध्यान रखना पड़ता है। मेरी परेशानी तुम बच्चे क्या जानो।''

''यदि ऐसी बात है तो तुम अपने पंख हमें दे दो। हम इनकी सहायता से आसमान में अपनी इच्छा से कहीं भी उड़ कर जा सकेंगे।'' बच्चों ने जिद करनी शुरू कर दी।

''ऐसी बात नहीं है बच्चो! यह पंख हमें इसलिए मिले हैं ताकि हम दूसरों की सहायता कर सकें। जब तक हम दूसरों की सहायता करते रहेंगे यह पंख बने रहेंगे। यदि हमने ऐसा नहीं किया तो यह पंख गायब हो जाएँगे।'' नीलू ने बताया।

''नहीं नहीं हमें दे दो तुम्हारे पंख, वरना हम जबरदस्ती ले लेंगे।'' इतना कहकर सारे बच्चों ने परी को घेर लिया और वह उसके पंखों को जबरदस्ती छीनने लगे।

''अरे–अरे यह तुम क्या कर रहे हो? देखो ऐसा मत करो, मेरे पंखों को हाथ मत लगाना वरना यह बेकार हो जाएँगे।'' नीलू घबरा कर बोली पर बच्चों ने उसकी एक नहीं सुनी और वे उसके पंखों को नोचने का प्रयत्न करने लगे।

बड़ी मुश्किल से नीलू ने उनके चंगुल से स्वयं को आजाद किया और फिर आसमान की ओर उड़ चली। उसके बाद तो बहुत लंबे समय तक उसकी जमीन पर आने की हिम्मत ही नहीं हुई।

''तुम सब बहुत गंदे हो। तुमने उस प्यारी सी परी को कितना तंग किया। बेचारी इतनी डरी कि आज तक फिर कभी नीचे नहीं आई।'' पिंकी ने उन बच्चों से कहा।

''हमें तो बस उसके पंख चाहिए थे बस। यदि अपने पंख हमें दे देती तो हम उससे कुछ नहीं कहते।'' बच्चे अभी भी अपनी गलती मानने के लिए तैयार नहीं थे।

''जरा बुद्धि से विचार करो, वह किस–किस को अपने पंख देती? यदि किसी को दे भी देती तो फिर वह वापस अपने देश कैसे जा पाती?'' पिंकी ने उनसे पूछा तो वे बगले झाँकने लगे।

''अरे हाँ! यह बात तो हमने सोची ही नहीं थी। हम पर तो उसके पंख प्राप्त कर लेने का भूत सवार था बस।'' अब तो बच्चों को भी अपनी चूक का अनुभव होने लगा था।

''अब पछताने से क्या होगा मित्रो! वह हम सबके व्यवहार को देखकर कितनी दुखी हो रही होगी?'' पिंकी ने उनसे कहा।

''जो हुआ सो हुआ, अब तुम ही कोई मार्ग निकालो जिससे परी रानी हमें क्षमा कर दे।'' बच्चे अपनी भूल पर शर्मिंदा होते हुए बोले।

तभी पिंकी को परी की कही एक बात याद आ गई।

''बच्चो! परी ने हमसे कहा था कि उसे यह

पंख दूसरों की भलाई करने के लिए मिले हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि उसने भलाई के काम करके ही यह पंख प्राप्त किए होंगे।'' पिंकी ने कहा।

''तुम कहना क्या चाहती हो, पिंकी?''

''यही कि परी की नाराजगी को दूर करने का बस यही एक उपाय है कि हम बच्चे आज से ही यह प्रण कर लें कि जब भी अवसर मिलेगा हम दूसरों की भलाई का काम करते रहेंगे। शायद बात बन जाए।'' पिंकी की यह बात बच्चों को पसंद आ गई।

''लगता है अभी तक परी रानी की नाराजगी हमसे दूर नहीं हुई तभी तो वह हमसे मिलने धरती पर नहीं आती।'' बच्चों का धैर्य अब जवाब देने लगा था।

''धैर्य रखो सब। कहते हैं धैर्य का फल मीठा होता है। देखना, एक ना एक दिन परी रानी हमसे आकर अवश्य मिलेगी।'' पिंकी ने उनसे कहा।

''मैं आ गई बच्चो।'' तभी एक प्यारी सी आवाज ने सबको चौंका दिया।

''अरे वाह! परी रानी! तुम आ गईं? इसका अर्थ यह हुआ तुमने हम सब बच्चों को क्षमा कर दिया?'' बच्चों ने मुस्कुराकर परी रानी से पूछा।

''तुम सब मेरे नन्हें मित्र हो और मित्रों से भला कैसी नाराजगी?'' नीलू ने मुस्कुराकर उत्तर दिया। ''मैं आज तुम्हें एक प्रसन्नता भरा समाचार देने आई हूँ।''

''प्रसन्नता से भरा समाचार? कैसी प्रसन्नता परी रानी?'' बच्चों ने उसकी बात सुनकर आश्चर्य से पूछा।

''प्रत्येक रविवार को मैं यहाँ इस बगीचे में तुमसे मिलने आया करूँगी, और हाँ उस दिन किसी एक बच्चे को थोड़ी देर के लिए मैं अपने पंख उधार दूँगी ताकि वह मेरी तरह उन पंखों की सहायता से आकाश में उड़ सके।'' परी रानी ने भेद खोला।

''हुर्रेऽऽ, मजा आ गया। सचमुच परी रानी! तुम कितनी अच्छी हो। हमने तुम्हारे साथ इतना बुरा व्यवहार किया फिर भी तुम हमारी इच्छा पूरी करने के लिए अपने पंख हमें देने के लिए तैयार हो। हमें अपनी गलती पर बहुत शर्मिंदगी हो रही है, हमें क्षमा कर दो।'' कहते हुए बच्चों की आँखों से आँसू बह निकले।

''पिंकी, यहाँ आओ। तुम चाहो तो थोड़ी देर

के लिए मेरे पंख लेकर अपनी इच्छा से कहीं भी उड़ सकती हो।'' नीलू परी ने पिंकी को अपने पास बुलाते हुए कहा।

''नहीं मित्र! यह पंख तुम्हें ही शोभा देते हैं। मैं तो बस इतना ही चाहती हूँ कि तुम हमसे मिलने आया करना।'' पिंकी ने उत्तर दिया तो नीलू ने उसे खुश होकर गले से लगा लिया।

– बीकानेर (राजस्थान)

आपकी पाती

आदरणीय सम्पादक महोदय,

नमस्ते!

आपकी प्रसिद्ध पत्रिका देवपुत्र का नया अंक पढ़ा। बहुत ही रोचक और बालकों के ज्ञानवर्धन की सामग्री प्रकाशित करने के लिए आपको बहुत-बहुत बधाई।

– इंदिरा त्रिवेदी, भोपाल (म. प्र.)

सम्पादक महोदय,

नमस्कार!

देवपुत्र का अक्टूबर अंक हमने पढ़ा। दशहरा की याद दिलाता हुआ कवर पेज बहुत पसंद आया। अपनी बात भी खूब पसंद आई। इसके साथ कहानियाँ, कविताएँ भी हमें अच्छी लगी।

आलेख भी जानकारी पूर्ण लगा। देवपुत्र पढ़ने का आनंद ही कुछ और है। इसे हम और हमारा पूरा परिवार पढ़ता है।

– बद्रीप्रसाद वर्मा अनजान,
गोरखपुर (उ. प्र.)

श्रीमान सम्पादक महोदय,

नमस्कार जी!

'देवपुत्र' का अक्टूबर २०२१ अंक भी अपनी स्तरीय परंपरा के अनुसार प्रासंगिता से भरपूर लैस है। मुखपृष्ठ जस चाहिए तस है। 'विजय पर्व है विजया दशमी, अनोखा दशहरा और विजया दशमी' के साथ 'अपनी बात' के अंतर्गत 'होनहार बिरवान' पीढ़ी हेतु आपका दिशा बोधक संदेश प्रेरणा का सेतु है।

'सीखा जाए तो रावण से भी बहुत कुछ सीखा जा सकता है।' अपने सपने को संकल्प बनाकर उसे साकार करना है।

लाल बहादुर शास्त्री एवं सरदार वल्लभ भाई पटेल पर सटीक सामग्री है। बाल साहित्य की धरोहर 'नए गगन के सूर्य: नागार्जुन' की दो कहानियाँ विशेष पठनीय हैं। गांधी जयंती पर 'बापू' कविता श्रृंखला की अंतिम कड़ी के रूप में ईख जैसी मिठास से भरी सीख देती है।

स्तंभ के प्राय: सभी मंच पर्याप्त टंच हैं। रचनाकार की अपेक्षा रचना को प्राथमिकता देती 'सचित्र प्रेरक बाल मासिक' यह पत्रिका बढ़िया उदाहरण है। क्रीम जैसी संपादकीय टीम है।

चंद्रकलाओं जैसी प्रगति के लिए हार्दिक शुभकामना है।

– राजा चौरसिया, कटनी (म. प्र.)

विज्ञान व्यंग

-संकेत गोस्वामी

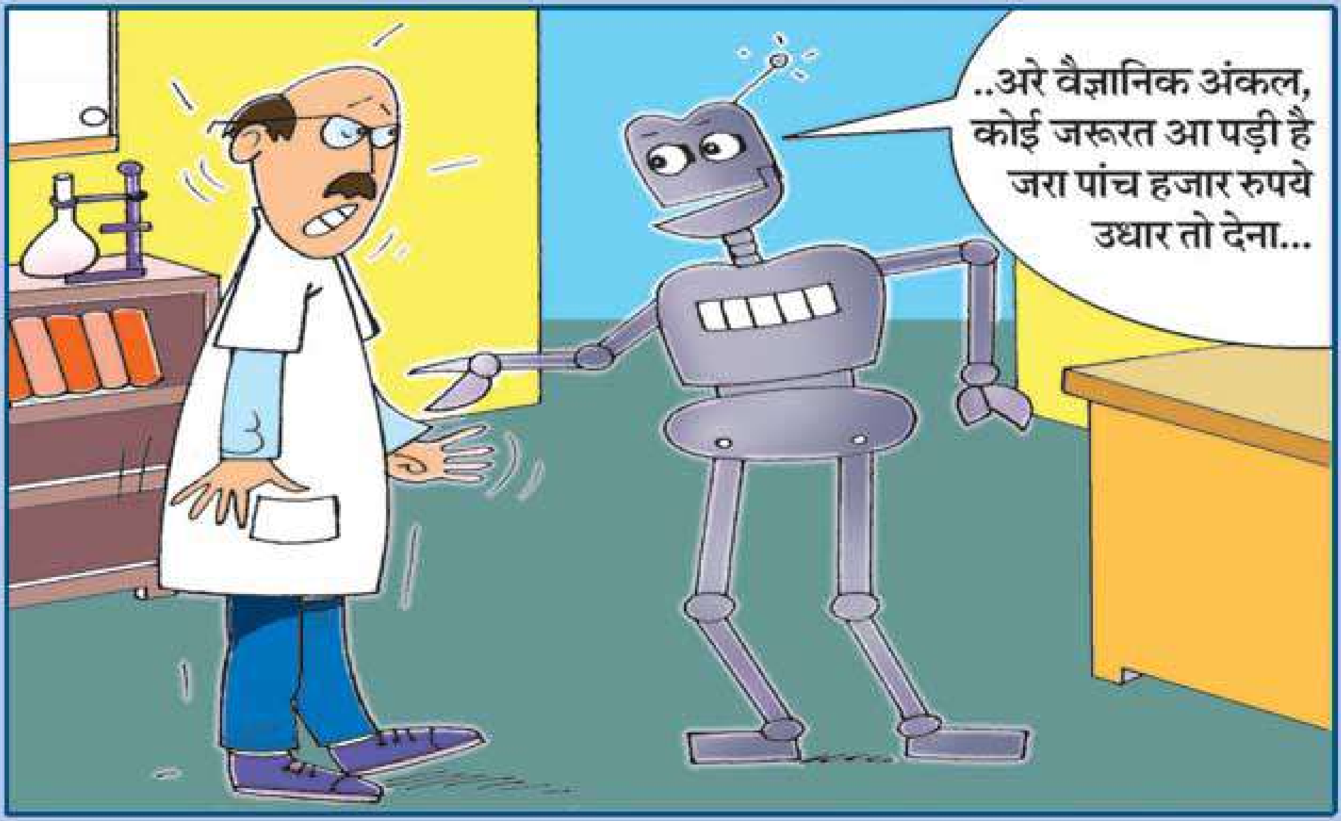

दिल में
हिंदुस्तान
देश को करें रोशन
मेक इन इंडिया
के साथ
SURYA
MADE IN INDIA
LIGHTING | APPLIANCES
FANS | STEEL & PVC PIPES
आत्मनिर्भर भारत की पहचान
SURYA ROSHNI LIMITED
E-mail: consumercare@surya.in | www.surya.co.in | suryalighting surya_roshni
Tel: +91-11-47108000, 25810093-96 | Toll Free No.: 1800 102 5657

पावन धरा स्वराज द्वीप की

– स्नेहलता

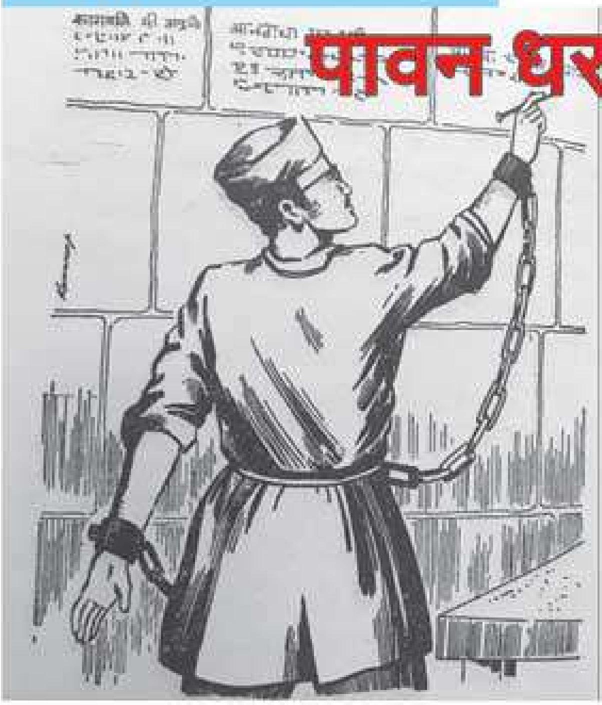

जिन वीरों ने आजादी के सपने देखे थे,
जान लुटाई देश की खातिर सौ सौ जुल्म सहे,
दृढ़ निश्चय, संकल्प, दु:सह दु:ख में भी नहीं डरे।
बलिदानी सच्चे सपूत हम उनको नमन करें।।
पावन धरा स्वराज द्वीप की इसको नमन करें।।

यह धरती जिसको जनता काला पानी कहती,
रूह कांपती उसकी, जिसको सजा यहाँ मिलती।
निश्चित मृत्यु यहाँ थी बसती, जीवन त्रास भरे।
इसमें मिला रक्त वीरों का इसको नमन करें।।
पावन धरा स्वराज द्वीप की इसको नमन करें।।

दस फिट लम्बी, छह फिट चौड़ी, काल कोठरी थी।
मच्छर, खटमल, बिच्छू, कीड़े, हर पल मौत खड़ी।
कंकड़, घास, फूस, घुन, ढेरों चावल में बिखरे।
भूखे पेटों पड़े जो कोड़े चमड़ी सब उघरे।।
पावन धरा स्वराज द्वीप की इसको नमन करें।।

था वीरों का जुर्म यही, आजादी मांगी थी।
कहीं चलाई कलम, कहीं बंदूकें दागी थीं।
हरि ने लिखा स्वराज पत्र में माँ क्यों नयन झरें।
भगा फिरंगी को देंगे, हम तुझे नहीं बिसरे।।
पावन धरा स्वराज द्वीप की इसको नमन करें।।

नासिक, अलीपुर, खुलना, मानिक टोला बम से,
थर्राया अंग्रेजी शासन वीरों के दम से।
काले पानी को भेजा वे दहशत से सिहरे,
कहने लगे लोग खुलकर अंग्रेज जाओ अब रे।।
पावन धरा स्वराज द्वीप की इसको नमन करें।।

हरीराम, होती वर्मा, शायर खैराबादी,
महावीर, जयदेव, बटुक, दत्ता, मोहित, मैत्री,
नोनी, नन्दगोपाल, इन्दु को कोल्हू में पेरे।
वीर विनायक सावरकर थे 'भारत जय' उचरे।।
पावन धरा स्वराज द्वीप की इसको नमन करें।।

हथकड़ियाँ, बेड़ी लगवाईं, कोड़ों से मारा,
कोल्हू में जोता, टिकटी पर चढ़ा कोंच डारा।
लोहे की छड़ बांध पैर डंडे से वार करे।
तपते तन से टप टप टपके शोणित धार झरे।।
पावन धरा स्वराज द्वीप की इसको नमन करें।।

मिल न सकें आपस में पैर, आड़ी कमान डाली।
रस्सी बांध घसीट, क्रूरता की हद कर डाली।
जीवन हुआ मृत्यु से बदतर पल पल जिए मरे।
वीरों ने दु:ख सहे ध्येय से तिलभर नहीं टरे।।
पावन धरा स्वराज द्वीप की इसको नमन करें।।

जिन वीरों ने इस धरती पर तन मन वार दिया।
कुछ भी चाहा नहीं कभी, सर्वस्व निसार किया।
करें आज वन्दन उनका, हम उनको याद करें।
श्रद्धा सुमन चढ़ा धरती पर उनको नमन करें।।
पावन धरा स्वराज द्वीप की इसको नमन करें।।

– लखनऊ (उ. प्र.)

नारायण शिला का अपवित्र होना

– तपेश भौमिक

एक बार की बात है कि महाराज कृष्णचंद्र जंगल के बीच पगडंडी से होकर घुड़सवारी करते हुए जा रहे थे। तभी उनकी दृष्टि एक पेड़ की ओट में मल–त्याग करते हुए अपने राज पुरोहित पर पड़ी। उन्होंने यह भी देखा कि कुछ ही दूरी पर एक दूसरे पेड़ की जड़ पर साथ ले जा रही नारायण शिला को उन्होंने रख छोड़ा था। महाराज को यह देखकर बुरा लगा।

महल में पहुँचकर उन्होंने सबसे पहले उन राज–पुरोहित को बुला भेजा। पुरोहित कुछ ही देर में महाराज के आगे उपस्थित हो गए। उन्हें देखते ही महाराज उबल पड़े।

''ब्राह्मण पुरोहित! आपने नारायण शिला का अपमान किया है।'' राजा ने क्रोध में काँपते हुए कहा।

''कैसे महाराज ?'' ब्राह्मण ने डरते हुए कहा।

''आपने नारायण शिला को पेड़ की जड़ पर रखकर अपराध किया है।''

''महाराज मुझे बहुत जोरों से 'गुरु–शंका' लगी हुई थी, मैं मल के वेग को रोक नहीं सका, इसलिए....।'' (मल त्याग करने की इच्छा हुई थी।)

''जो भी हो, तुमने नारायण शिला का अपमान किया है। इसलिए तुम्हें राज पुरोहित के पद से निलंबित किया जाता है। साथ ही तुम किसी यजमान के यहाँ अब से कोई भी पूजा–संस्कार आदि नहीं करा सकते।'' महाराज ने एक ही सांस में सारी चेतावनी दे दी।

इतना सुनते ही ब्राह्मण पुरोहित रोने लगे। महाराज ने उनकी एक न सुनी। उनकी आजीविका का माध्यम छूट गया था। उनकी आर्थिक स्थिति इतनी खराब हो गई थी कि लोगों ने उन्हें गोपाल के पास जाने की सलाह दी।

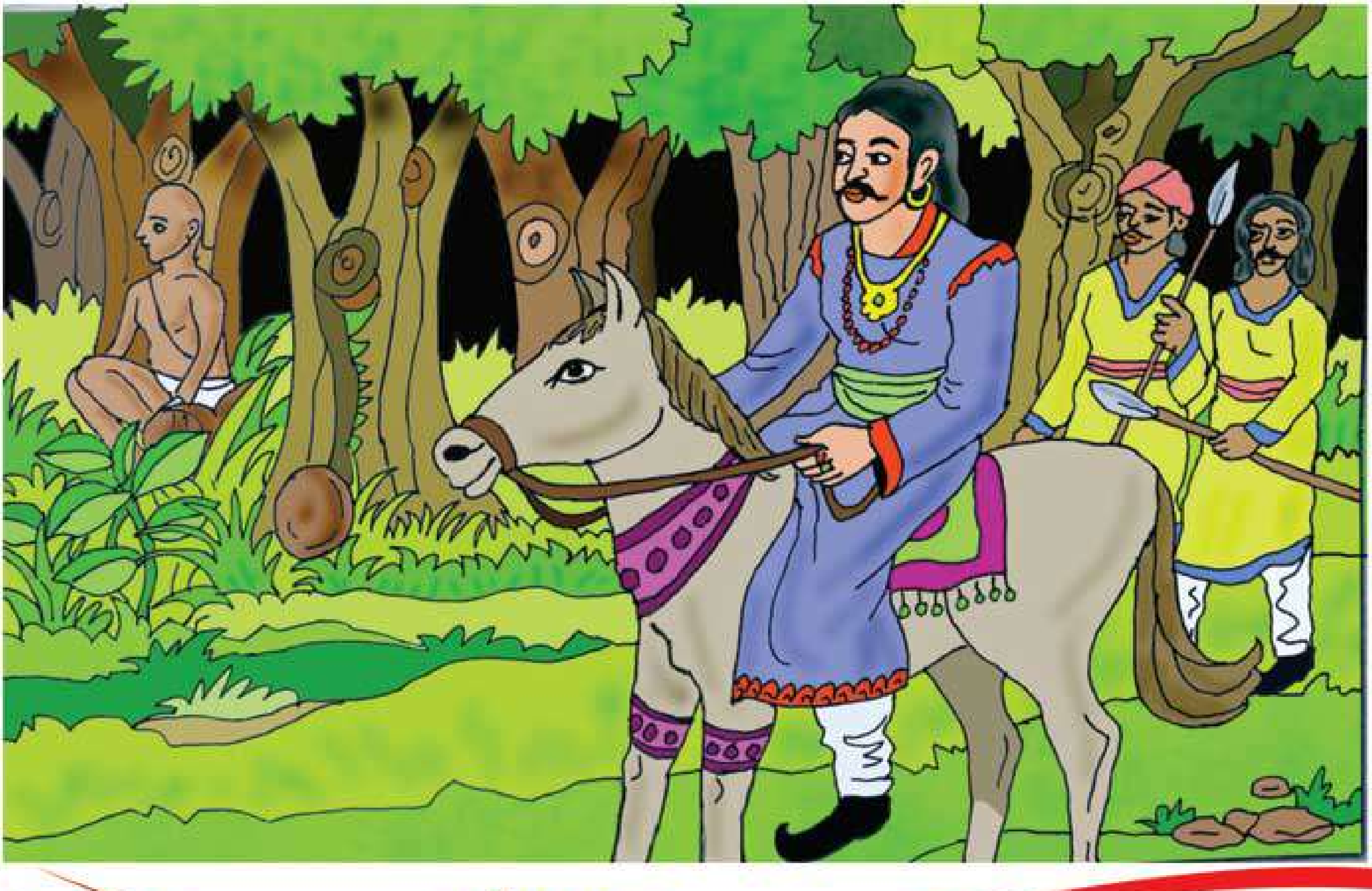

पुरोहित के मन में एक आशा जगी कि उनके लिए गोपाल अवश्य कुछ कर सकता है। वे अब कुछ भी देर न करते हुए सीधे गोपाल के पास जाकर धरने पर बैठ गए। उनकी आप–बीती सुनकर गोपाल का हृदय पिघल गया। उन्होंने ब्राह्मण पुरोहित को यह कहकर भरोसा दिलाया कि वे अवश्य उनके लिए कुछ न कुछ करेंगे।

कुछ दिन बाद जाड़े की एक शाम को महाराज गोपाल को साथ लिए घोड़ा गाड़ी की सवारी करते हुए भ्रमण के लिए निकले थे। गाड़ी के रुकने पर एक घोड़े ने मल (लीद) त्याग कर दिया। इस पर गोपाल हल्ला मचाने लगे। ''महाराज! इस जाड़े की शाम को अब नदी में नहाना कितनी परेशानी की बात है।''

''क्यों ? नहाना क्यों पड़ेगा जी ?''

''क्यों नहीं पड़ेगा ?'' ''घोड़े ने मल त्याग कर दिया, हम अब अपवित्र हो गए न!''

''इसमें अपवित्र होने की क्या बात है?'' महाराज ने आश्चर्य चकित होकर पूछा।

''महाराज जब पुरोहित के मल त्याग करने पर नारायण शिला अपवित्र हो सकती है तब घोड़े के मल त्याग करने पर हम क्यों नहीं अपवित्र होंगे ?'' गोपाल ने अपनी युक्ति दी। ''हाँ, मैं समझ गया, अवश्य उस ब्राह्मण ने तुम्हें घूस दी होगी, मुझे मूर्ख बनाने के लिए।'' महाराज ने क्रोध से भरकर कहा।

''नहीं महाराज! मैं उस गरीब ब्राह्मण से घूस क्यों लूँगा ?'' घूस तो मैं आपसे लेता हूँ, पेचीदे मामलों को सुझला कर।'' गोपाल ने तत्क्षण मुस्कुराते हुए उत्तर दिया।

दूसरे ही दिन महाराज ने उस ब्राह्मण को बुलाकर अपने किए पर पश्चाताप किया और कुछ धन देकर पुन: राज पुरोहित के पद पर आसीन कर दिया एवं साथ ही उन पर लगाए गए सारे प्रतिबंध भी हटा लिए।

– कूचबिहार (पं. बंगाल)

छ: अंगुल मुस्कान

माधव – सोहन से जन्मदिन की मिठाई मांगो तो कहता है मैं २९ फरवरी को जन्मा था। राघव तुम बताओ तुम्हारा जन्मदिन कब है ?

राघव – मैं तो कुंभ के मेले पर पैदा हुआ था।

*****

सुनीता – एम्बेसेडर किसे कहते हैं ?

गोलू – कार को।

सुनीता – मेरा मतलब है कि राजदूत किसे कहते हैं ?

गोलू – मोटर साइकिल को।

*****

एक महिला डॉक्टर के पास गई, बोली – दाँत उखाड़ने की कितनी फीस लगेगी ?

डॉक्टर – ५०० रुपये।

महिला – कुछ कम कीजिए न।

डॉक्टर – ठीक है, १००० में तीन।

*****

एक व्यक्ति की नई कार के पीछे लिखा था **'सावन को आने दो'**। पीछे से एक ट्रक ने ठोक दिया उस ट्रक पर लिखा था **'आया सावन झूम के'**।

*****

शिक्षिका – सोलहवीं सदी के सम्राटों के बारे में तुम कुछ जानते हो ?

राजू – हाँ दीदी!

शिक्षिका – क्या जानते हो ?

राजू – यही कि वे सब मर चुके हैं।

छोटी-सी नायिका

– एस. भाग्यम शर्मा

आयुषी जो आठवीं कक्षा की छात्रा थी विद्यालय से आते ही घर की बैठक में टंगे सुंदर लड़की के चित्र को जो प्रसिद्ध चित्रकार रमाकांत द्वारा बना था, बड़े ध्यान से देख रही थी। वह उस चित्र की सुंदर लड़की को बिना आँख झपकाए देखती रही।

रसोई से उसकी माँ बाहर आई बोली– ''आयुषी! विद्यालय से आए बहुत देर हो गई क्या?'' पूछते ही वह जोर-जोर से रोने लगी और कहने लगी– ''माँ अब मैं कभी विद्यालय नहीं जाऊँगी। सब लोग मुझे 'काली-काली' कहकर चिढ़ाते हैं। मेरा नाम ही काली कर दिया। मेरे नाम आयुषी को भूल ही गए।''

इस तरह माँ की गोदी में सिर रखकर रोज रोना व माँ का उसको सांत्वना देना यह प्रतिदिन का ही काम हो गया था।

''बेटी आयुषी! तुम्हारा रंग अवश्य सांवला है परन्तु मन बहुत ही अच्छा है। तुम्हारा चेहरा सुंदर नहीं है तो कोई बात नहीं है तुम्हारे चेहरे में जो तेज है वह किसी के चेहरे में नहीं है बेटा!''

''माँ! माँ! कौन मेरे चेहरे के तेज को देखता है? मुझे आपने क्यों जन्म दिया? मुझे आप अपने पेट में ही मार देती ना माँ।'' उसकी बात सुनकर माँ का मन बहुत दुखी हुआ। यह तो मेरी पहली संतान है। इसमें कितनी हीन भावना है। खेल, वाद-विवाद, निबंध सभी प्रतियोगिताओं में प्रथम आकर ढेर सारे पुरस्कार लेने वाली आयुषी इस वर्ष किसी भी प्रतियोगिता में भाग नहीं लिया। उसमें हीन भावना घर कर गई। इस बात को सोच माँ का मन दुखी हुआ।

उसी समय कार्यालय से आए पिताजी ने पूछा– ''क्यों भाई! आयुषी क्यों रो रही हो?''

''पिताजी! मेरे साथ विद्यालय में पढ़ने वाली प्रिया, आकांक्षा, टीना सब मुझे 'काली-काली' कहकर चिढ़ाते हैं। मुझे शाला जाना ही अच्छा नहीं लगता। मैं बहुत ही कुरूप हूँ पिताजी!'' उसके रोते-रोते कहते ही पिताजी बोले– ''आयुषी बेटी! इतनी सी बात! आओ बेटी! मैं तुम्हें ब्यूटी-पार्लर ले चलता

हूँ। उसके बाद तुम्हारे साथ पढ़ने वाले सब तुम्हें नायिका कहकर बुलाएँगे।''

''नहीं पिताजी! पार्लर जाऊँगी तो भी मेरी टेढ़ी नाक, उल्लू जैसी मेरी आँखें व काला रंग इन सबको तो ठीक नहीं ही कर सकते। आखिर तक मेरी यही दशा होगी। मुझे जीने की ही इच्छा नहीं है पिताजी!'' पिताजी ने उसे अपनी गोद में लिटाकर, उसके सिर को सहलाते हुए उसे आश्वस्त किया। पर उनका मन भारी हो गया।

हमेशा प्रसन्न रहने वाली आयुषी अब हमेशा शोक में डूबी हुई ही दिखाई देने लगी थी।

पहले सबसे मिलकर बातचीत करने वाली अब अपने कमरे में ही बंद रहने लगी। दूसरों के हीन भावना के आधीन होने के कारण अपने जीवन को ही भार समझने लगी। उसे पहले जैसे स्थिति में लाने के लिए उसके पिताजी उपाय सोचने लगे।

उस दिन रविवार था। ''आयुषी बेटी! आज तुम्हारी पसंद के चित्रकार श्री. रमाकांत जी के चित्रों की प्रदर्शनी अपने जयपुर के कला केन्द्र में लगी है। उसके उद्घाटन में वे जयपुर आ रहे हैं। तुम भी चलो। हम दोनों उनसे मिलकर आते हैं।'' पिताजी के ऐसा कहते ही बहुत खुश होकर उछल कर उठी आयुषी।

''सच कह रहे हो पिताजी! मैं अपने जीवन में एक बार चित्रकार रमाकांत जी से मिलने की बहुत इच्छा है। हम अभी चलते हैं पिताजी!''

कहकर वह जल्दी-जल्दी तैयार होने लगी। उसके तैयार होने को देखकर उसके माँ-पिताजी बहुत प्रसन्न हुए।

कला केन्द्र के अन्दर जाकर जिस हॉल में प्रदर्शनी लगी थी, वे वहाँ गए तो दरवाजे के बाहर ही एक आदमी पहिए वाली कुर्सी पर बैठा था। जिसके दोनों पैर नहीं थे व एक आँख भी नहीं थी। चेहरा भी देखने में कुरूप था।

अंदर घुसते ही आयुषी, अंदर सुंदर-सुंदर चित्रों को देख मंत्र-मुग्ध हो गई थी। वह चित्रकार रमाकांत जी को देखने की प्रबल इच्छा को रोक नहीं पा रही थी। वहाँ कोट-सूट पहनकर, लंबे-लंबे सुंदर-सुंदर कई लोग चित्रों को देख, मूल्य पूछ रहे थे। खरीदने वालों की भीड़ लगी हुई थी। उन लोगों से उसने पूछा- ''रमाकांत जी कौन हैं? बताइए कृपया?''

एक सज्जन बोले- ''बेटी! रमाकांत जी तो बाहर शुद्ध हवा में खुले में बैठे हैं। जो पहिए वाली कुर्सी में बैठे हैं वे ही रमाकांत जी हैं।''

उनके कहते ही, आयुषी को सदमा-सा लगा। तुरन्त भागकर उन्हें देखने चली गई। वहाँ जाकर उनके हाथों को अपने हाथ में लेकर, ''काका! मैं आपकी बहुत बड़ी प्रशंसक हूँ। परन्तु आप दिव्यांग हैं मुझे पता नहीं था।''

आयुषी के ऐसा कहते ही चित्रकार रमाकांत जी धीरे से मुस्कुराए, फिर अपनी कहानी आयुषी को सुनाने लगे।

''मैं दस वर्ष तक साधारण बच्चे की तरह ही था। शाला के सब खेलों में भाग लेकर पहला पुरस्कार भी प्राप्त करता था। एक रोड दुर्घटना में एक आँख व दोनों पैरों को खो दिया। इसका मुझे भारी सदमा तो लगा, पर मेरे माँ-पिताजी के दिए प्रेरणा से मैं उठने लगा।

भगवान ने मेरे दोनों हाथों को कुछ नहीं किया ना? मैं कुछ कर सकूँ इसीलिए यह हाथ हैं ऐसा मैंने अनुभव किया। माँ-पिताजी की सहायता से चित्रकारी सीखने लगा। मैं कुछ करके दिखाऊँगा इस विश्वास ने मुझे चित्रकारिता में मेरा उत्साह जगाया।

उत्साह ने मुझे प्रयत्न करते रहने को उकसाया। मेरे परिश्रम ने मुझे जीवन में ऊँचा उठाया। मेरे बनाए चित्र न केवल देश के अंदर बल्कि पूरे विश्व के लोगों को पसंद है। मेरे चित्रों की विदेशों में बहुत माँग है। इसने मुझे न केवल आर्थिक रूप से ही सक्षम

बनाया पर खूब प्रसिद्धि भी दिलाई। मुझे इससे जीवन में शांति भी मिली।

आज मैं पूरे संसार का प्रसिद्ध चित्रकार रमाकांत बनकर हूँ। बेटी तुम्हें भी अपने जीवन में बहुत ऊँचा उठना है समझी ? अच्छे कामों में गलत चीजों को देखने वाला जीवन में गिरेगा। खराब या विषम परिस्थितियों में भी अच्छी बातों को देखने वाला जीवन को जीत लेता है।'' चित्रकार रमाकांत बोले।

उनके शब्दों को आयुषी ने अपने मन में उतार लिया। 'एक आँख, दोनों पैरों के बिना एक आदमी विश्वास के पैरों पर खड़ा हो अपने जीवन को सार्थक कर रहा है। हमें तो भगवान ने सब अंग दिए हैं उसके लिए हमें उसे धन्यवाद देना चाहिए। फिर मैं क्यों नहीं ऊँचा उठ सकती ?' आयुषी विचार करने लगी।

आठ महीने समाप्त हुए। विद्यालय के वार्षिक उत्सव में आयुषी सभी प्रतियोगिता में प्रथम आई। कई पुरस्कार अपनी झोली में समेटे।

आयुषी की सहेलियों ने उसे नायिका माना। उसको वे 'आयुषी! आयुषी! कहकर बुलाने लगीं।

माँ बोली– ''देखा आयुषी...! काली–काली कही जाने वाली तुम आज अपने परिश्रम व योग्यता से नायिका बनी हुई हो।'' उनके कहते ही आयुषी का मन मयूर नाच उठा।

– जयपुर (राजस्थान)

कविता

राष्ट्रचिन्ह, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान

– प्रो. सी. बी. श्रीवास्तव 'विदग्ध'

हर एक स्वतंत्र राष्ट्र की होती अलग पहचान।
हर एक का राष्ट्र चिन्ह है, राष्ट्र ध्वज व राष्ट्र गान।।
हर नागरिक को इनका सही ज्ञान चाहिए।
इनका न हो अपमान इसका ध्यान चाहिए।।
इनका है क्या इतिहास व किसका है क्या अर्थ।
यह समझना जरूरी है, जिससे न हो अनर्थ।।
हैं सिंह राष्ट्र चिन्ह औ जन–गण–मन है राष्ट्र गान।
है तिरंगा राष्ट्र ध्वज हमारा, देश की शान।।
केसरिया–श्वेत–हरा ध्वज में तीन रंग हैं।
नीला अशोक चक्र, बीच में है संग में।।
ये त्याग, शांति, समता, प्रगति के हैं शुभ प्रतीक।
भारत की भावना के प्रतिनिधि हैं ये सटीक।।
ध्वज को फहरता देख स्वच्छ नील गगन में।
उठती है लहर गर्व व गौरव की हर मन में।।
झंडे में भारतीयों के मन प्राण बसे हैं।
जीवन सितार के सजीव तार कसे हैं।।
हम जहाँ हों, कर्त्तव्य है इनका करें सम्मान।
ले प्रेरणा इनसे करें हम राष्ट्र का उत्थान।।

– जबलपुर (म. प्र.)

आलू जीता कद्दू हारा

– नारायण लाल परमार

स्व. श्री नारायण लाल परमार जी का जन्म ०१ जनवरी १९२७ को गुजरात के कच्छ में अंजार नामक स्थान पर हुआ था। बालसाहित्य का यह अनूठा रचनाकार २७ अप्रैल २००३ में मध्य प्रदेश के धमतरी जिले के टिकरापारा में बालसाहित्य जगत को सूना करके चला गया। –सम्पादक

एक सबेरे कद्दू आया
बोला– ''सुन रे आलू।''
दोनों चलकर दौड़ लगाएँ
जगह देखकर ढालू।।
कद्दू बीच राह में फूटा
चूर हुआ अभिमान।
छोटे से आलू ने बढ़कर
मार लिया मैदान।।

– अंजार (गुजरात)

ये बचपन

– वसीम अहमद नगरामी

बड़ा सलोना जादू–टोना ये बचपन।
प्यारे बच्चो ! कभी न खोना ये बचपन।।
मैल न कोई भेद पराया न अपना,
छू पाए न कभी कोई कलुषित सपना।
पावन–निर्मल व शीतल है तन और मन।
प्यारे बच्चो ! कभी न खोना ये बचपन।।
स्वप्न सजीले रंग–रंगीले आते हैं,
सैर कराने परिस्तान ले जाते हैं।
अपने सुख–संसार में यूँ ही रहो मगन।
प्यारे बच्चो ! कभी न खोना ये बचपन।।
मायावी संसार से यूँ ही दूर रहे,
तेरा हर पल खुशियों से भरपूर रहे।
चंदा–तारों को छूने की रहे लगन।
प्यारे बच्चो ! कभी न खोना ये बचपन।।

– लखनऊ (उ. प्र.)

बहादुर माँ

– डॉ. राजीव गुप्ता

गीत चौथी कक्षा में थी। वह बहुत ही होशियार और हँसमुख बच्ची थी। वह हमेशा पढ़ाई-लिखाई के साथ ही साथ खेलकूद में भी प्रथम आती थी। सब लोग उसे बहुत प्यार करते थे।

गीत के पिताजी की २ वर्ष पहले ही मृत्यु हो गई थी पर माँ उसका खूब ध्यान रखती थीं। वे उसे पिता की कमी अनुभव नहीं होने देती थीं।

इधर कुछ दिनों से गीत परेशान सी रहने लगी थी। इसका कारण यह था कि उसकी कक्षा में एक मोटा लड़का बंटी उसे बहुत परेशान करने लगा था।

वह अधिकांश उसका टिफिन छीनकर उसका नाश्ता खा जाता था। वह उसे धमकी भी देता कि अगर उसने उसकी शिकायत शिक्षक से की तो वह उसकी पिटाई लगाएगा।

उसकी बात सुनकर गीत बहुत डर गई थी। उसे ज्ञात था कि बंटी बहुत ही बदमाश लड़का है।

वह विद्यालय के कई छोटे बच्चों की पिटाई कर चुका है। इस समय गीत को अपने पिता की बहुत याद आती।

वह सोचती यदि आज उसके पिताजी होते तो वह उनसे कहकर बंटी की ऐसी मरम्मत करवाती कि वह अपनी हेकड़ी हमेशा के लिए भूल जाता।

गीत की माँ से गीत की उदासी छिपी नहीं रही। उन्होंने गीत से उसकी उदासी का कारण जानना चाहा। तो वह टाल गई, क्योंकि वह अपनी माँ को दुखी नहीं करना चाहती थी।

गीत जानती थी कि उसकी माँ दिनभर कितनी मेहनत करती हैं।

वे घर के कामकाज करने के साथ ही साथ नौकरी भी करती हैं, जिससे गीत का लालन-पालन ठीक ढंग से हो सके।

एक दिन गीत अपनी कक्षा में बैठी पढ़ रही थी। उसी समय रामू काका ने आकर कहा कि गीत और बंटी को प्रधानाचार्य अपने कार्यालय में बुला रही है। यह सुनकर गीत को आश्चर्य हुआ। उसने चपरासी से पूछा– ''वह किसलिए, काका?''

''बेटी! यह मुझे नहीं मालूम। उन्होंने अभी तुम दोनों को कार्यालय में बुलाया है। शायद कार्यालय में

तुम से कोई मिलने आया है।'' रामू काका ने कहा।

रामू काका की बात सुनकर पिंकी सोच में पड़ गई।

उधर बंटी ने कक्षा से निकलते ही उसे घूर कर देखा, ''कहीं तुमने प्रधानाचार्य जी से मेरी शिकायत तो नहीं की है?''

''नहीं तो, मुझे तो स्वयं नहीं पता है कि प्रधानाचार्य जी ने हम दोनों को कार्यालय में क्यों बुलाया है।''

वह कुछ सहम कर बोली।

दोनों जब कार्यालय पहुँचे तो वहाँ प्रधानाचार्य जी के साथ अपनी माँ को बैठा देखकर गीत की खुशी का ठिकाना नहीं रहा।

''क्या यही वह लड़का है, गीत बेटी! जो आपको परेशान करता है?'' प्रधानाचार्य जी ने बंटी को घूरते हुए कहा।

''हाँ, दीदी! पर मैंने तो कभी भी आपसे बंटी की शिकायत नहीं की?'' चकित होकर गीत ने कहा।

''यही तो आपने गलती की गीत बेटी! आप इसकी घुड़की से डर गई, इसीलिए इसकी हिम्मत बढ़ती चली गई।

आज अगर आपकी माताजी विद्यालय आकर मुझे सारी बात नहीं बतातीं तो मुझे तो इस बंटी की बदमाशियों का कुछ पता ही नहीं चलता।'' प्रधानाचार्य जी ने कहा।

''लेकिन माँ! आपको कैसे मालूम पड़ा कि बंटी मुझे परेशान करता है?'' गीत को हैरानी हुई।

''मुझे तुम कई दिनों से परेशान लग रही थी, लेकिन तुम मुझे कुछ बताना नहीं चाहती थी।

इसलिए मैंने तुम्हारी सहेलियों से मिलकर सारी बात का पता लगा लिया कि तुम क्यों परेशान हो।'' गीत की माँ ने कहा।

''ओह माँ! आप कितनी अच्छी हैं और बहादुर भी।'' गीत ने अपनी माँ से लिपटते हुए कहा।

''गीत बेटी! आज से आप भी बहादुर बनिए और किसी भी अन्याय को सहन मत कीजिए।'' प्रधानाचार्य जी ने उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा।

''जी दीदी! अवश्य।'' उसने पूरे आत्म–विश्वास से बंटी की ओर देखते हुए कहा।

बंटी की हालत अभी से देखने लायक थी जबकि उसे अभी दण्ड मिलना बाकी था।

– फर्रुखाबाद (उ. प्र.)

क्रान्तिकारी जयी राजगुरु

– डॉ. कृष्णचन्द्र तिवारी 'राष्ट्रबन्धु'

जयी राजगुरु ओड़िया भाषी थे लेकिन उन्होंने उनसे प्रेरणा प्राप्त की जो समसामयिक होते हुए भी ओड़िया भाषी नहीं थे, जैसे जगबन्धु विद्याधर महापात्र, तापंन के दलबेहेरा, बाहु बालेन्दु दोदा विशोई, वीरेन्द्र सुरेन्द्र राय आदि। साधनों की कभी और दूरी के रहते इनका अभियान सम्मिलित नहीं बन सका। खुर्धा राज्य के सेनानायक और राजगुरु जयकृष्ण महापात्र थे जो बाद में जयी राजगुरु के नाम से विख्यात हुए।

भारतीय स्वातंत्र्य इतिहास में वे अमर हैं। खुर्धा में उनके पिता गदाधर राजगुरु थे। २६ अक्टूबर १७३६ में उनका जन्म कार्तिक (कार्तिक शुक्ल नवमी) पुरी के सन्निकट वीर हरे कृष्णपुर नामक गाँव में हुआ था। उनकी माता का नाम हीरामणि देवी था। उनके पिता चाँद राजगुरु के नाम से लोकप्रिय थे।

बचपन में, जयी काले घोड़े से गिरते–गिरते बचे और उसकी बेल्ट से लटक गए थे। पूजा करके लौटते समय पिता ने पुत्र को देखा तो बालक हँस रहा था और वे आश्चर्यचकित थे। पिता ने रुचि परखकर पुत्र को शस्त्र और शास्त्र की शिक्षा दी।

कुछ समय बाद, पहले पिता और बाद में माता का देहान्त हो गया। माँ की इच्छा सुशील बहू लाने का एक सपना बनकर रह गई।

क्योंकि जयी गुरुदेव ने भीष्म की तरह ब्रह्मचर्य का आजीवन कठोर व्रत ले लिया क्योंकि अंग्रेजों से देश की स्वतंत्रता लेने का कार्य साधारण और सामान्य नहीं था और उन्हें इसके लिए अपना बलिदान करना था।

खुर्धा के राजा महाराज दिव्यसिंह देव ने १७८० में राजगुरु का दायित्व जयी राजगुरु को सौंप दिया। उनके न रहने पर वर्ष १८०३ में अल्पवयस्क युवराज मुकुन्द देव को लेकर अंग्रेजों ने 'लावारिस का वारिस' बनने का षडयंत्र चलाया तो प्रधानमंत्री जयी राजगुरु ने इसका जोरदार विरोध किया।

अंग्रेज गवर्नर बेलेसली ने नागपुर के राजा के द्वारा नियुक्त मराठा सूबेदार सदाशिव को परास्त कर दिया और एक फर्जी संधि पत्र तैयार कराया कि मराठा राज्य के अन्तर्गत सभी भागों पर अंग्रेज अधिकार करेंगे। राजधानी कटक जाने का मार्ग मुक्त रहेगा और एक लाख रुपये अंग्रेज सरकार देगी।

इसके विरुद्ध मुकुन्द देव के प्रति जयी राजगुरु ने विद्रोह किया। जगन्नाथ मंदिर का प्रबंध अंग्रेजों को नहीं सौपेंगे, यह निश्चय स्पष्ट किया। फलतः मुकुन्द देव ने अंग्रेजों को संधिपत्र बिना हस्ताक्षर किए वापस कर दिया। इससे अंग्रेजों का सीधा विरोध जयी

राजगुरु से चल निकला। बारबाटी कटक मार्ग पर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया।

जयी राजगुरु ने भोंसले राजाओं से मंत्रणा की। राजगुरु, सुडंग में, अपने सैनिकों को तैयार कर रहे थे। जालंधर ब्यूह, चक्रव्यूह, अर्ध चक्रव्यूह, सची व्यूह और सेनाशाही व्यूह में उनके तीन दलों के सैनिक पदातिक, अश्वारोही और राजरोही निपुण थे। जयी राजगुरु ने गुरिल्ला युद्ध किया। कर्नल हारकाट से उन्होंने चालीस हजार रुपए जुर्माने में वसूल किए जिसे उन्होंने गरीबों में बाँट दिया।

जयी राजगुरु तंत्रज्ञ थे। शंभु भारती उनके हार्दिक विश्वस्त थे फिर भी वे सफल न हो सके। खुर्धा के पास मेंण्ढ़ासाल में कुछ अपने ही लोगों ने विश्वासघात किया। गढ़ में अंग्रेजों का प्रवेश १८०४ में हुआ। चरण, काँचिबेवा और सन्त मोहम्मद को अंग्रेजों ने धन का लालच देकर मिला लिया था। बचपन में मुकुन्द देव ने अपने अभियोगों को राजगुरु के सिर मढ़ दिया किन्तु कृतज्ञता निभाने में जयी राजगुरु ने सारे अपराध सगर्व अपने ऊपर ओढ़ लिए।

उनके लिए राजा ईश्वर का अंश था। राजगुरु के कथन पर राजा मुकुन्द देव को मुक्त कर दिया गया और जयी राजगुरु को कटक के कोट बाराबाटी में बंधक बना लिया गया। मुकुन्द को जगन्नाथ मंदिर का प्रबंधन मात्र दिया गया ताकि धर्मद्रोह न हो।

६ दिसम्बर १८०६, बालेश्वर के मैदिनपुर गाँव के आसपास बाँधीतोटा में एक बरगद के पेड़ की दो शाखाओं में जयी राजगुरु के दोनों पैर अलग-अलग बाँधकर उनके शरीर के दो भाग क्रूरता से किए गए। देशद्रोहियों को धन मिला तो थोड़े समय तक चला लेकिन स्वतंत्रता संग्राम अमर सेनानी जयी राजगुरु हमेशा के लिए अमर है। उनके प्रति श्रद्धा और देश द्रोहियों के प्रति भर्त्सना के भाव किसी भी चर्चा में बने रहेंगे।

– कानपुर (उ. प्र.)

सूरज दादा चिढ़ कर भागे

– श्यामपलट पाण्डेय

सूरज दादा, चिढ़ कर भागे
जाकर छिपे बादलों के घर।
हफ्तों बाद आज हैं निकले
बहुत मनाया, बोले आकर।।

सूखी झीलें, ताल, नदी, सब
मैं प्यासा ही रह जाता हूँ।
शेष बचा जल, हुआ प्रदूषित
उसको भी नहीं पी पाता हूँ।।

सागर का खारा पानी है
उससे प्यास नहीं बुझती है।
चलते-चलते थक जाता हूँ
चलने से छुट्टी नहीं मिलती।।

बंद करो अब और प्रदूषण
जल जीवन है, उसे बचाओ।
पर्यावरण शुद्ध रखना है
पेड़ लगाओ, वन उपजाओ।।

– अहमदाबाद (गुजरात)

मूर्ख नगरी

– संजीव जायसवाल 'संजय'

काफी समय पहले की बात है। उत्तर भारत में एक मूर्ख नगरी थी। उसका असली नाम तो कुछ और ही था किन्तु वहाँ सभी मूर्ख रहते थे इसलिए उसका नाम मूर्ख नगरी ही हो गया था।

मूर्ख नगरी का राजा भी बहुत बड़ा मूर्ख था। उसने अपने दरबार में एक से बढ़कर एक मूर्खों को भर रखा था। वे सब दिनभर अजीबो–गरीब हरकतें किया करते थे। मूर्खराज जिस पर प्रसन्न हो जाता उसे ढेरों पुरस्कार दिया करता था।

उन्हीं दिनों काशी में धर्मदास नामक एक विद्वान ब्राह्मण रहता था। सभी लोग उसका बहुत सम्मान करते थे। किन्तु खाली सम्मान से पेट तो नहीं भरता। धर्मदास के दिन बहुत गरीबी में कट रहे थे। इसके कारण उसकी पत्नी हमेशा उसे ताना मारा करती थी।

परेशान होकर धर्मदास ने एक दिन मूर्ख नगरी जाने का निश्चय किया। सोचा यदि वहाँ का राजा एक बार भी प्रसन्न हो गया तो उसकी गरीबी हमेशा के लिए दूर कर देगा। धर्मदास के मित्रों ने उन्हें वहाँ न जाने की सलाह दी किन्तु धर्मदास नहीं माना। वह मूर्ख नगरी जा पहुँचा।

मूर्ख राज ने धर्मदास का बहुत सम्मान किया। उसे ऊँचे सिंहासन पर बिठलाया और वेद–मंत्रों के बारे में ज्ञान देने के लिए कहा। धर्मदास अपना प्रवचन प्रारम्भ करने जा ही रहा था कि किसी की चीख सुनकर रुक गया।

अगले ही पल मूर्खराज का छोटा राजकुमार चीखता–चिल्लाता दरबार में आया। वह अपने दाएँ कान को पकड़ कर जोर–जोर से उछल रहा था।

''राजकुमार! क्या बात है? तुम इतना चीख–चिल्ला क्यों रहे हो?'' मूर्खराज ने पूछा।

''पिताश्री! मेरे कान में कोई छेद किए दे रहा है।'' राजकुमार ने दर्द भरे स्वर में बताया।

इतना सुनते ही मूर्खराज की आँखें लाल अंगारा हो उठीं। उसने अपनी तलवार को खींचते हुए कहा– ''किसकी इतनी हिम्मत जो मेरे बेटे के कान में छेद करे। सामने आये मैं अभी उसकी गर्दन उड़ा दूँगा।''

मूर्खराज के साथ–साथ उसके दरबारियों ने भी अपनी–अपनी तलवारें निकाल लीं और हवा में भांजने लगे। मूर्खराज ने कई बार चुनौती दी लेकिन कोई सामने नहीं आया।

धर्मदास अत्यन्त आश्चर्य के साथ यह तमाशा देख रहा था। उससे रहा नहीं गया। उसने समझाया– ''महाराज! आप शांत होकर बैठ जाइये। राजकुमार के कान में कोई दुश्मन छेद नहीं कर रहा बल्कि लगता है कि कोई चीटीं घुस गई है। वही काट रही है।''

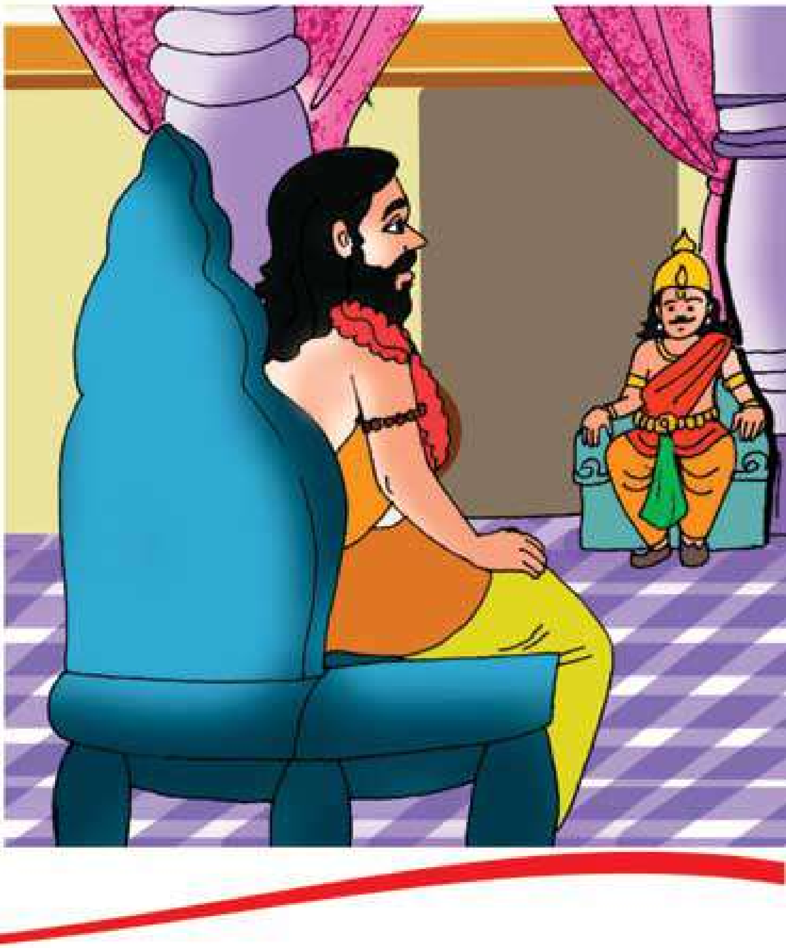

''तुम ठीक कहते हो। मैं राजा होकर एक छोटी सी चींटी से युद्ध नहीं करूँगा। ऐसा करना मेरी शान के विरुद्ध है।'' मूर्खराज ने कहा और फिर अपनी तलवार को म्यान में रखकर बैठ गया।

राजकुमार का दर्द हर पल बढ़ता जा रहा था। मूर्खराज ने अपने सेनापति की ओर देखा तो उसने एक सैनिक को अपना भाला लाने के लिए कहा।

''सेनापति महोदय! आप भाला क्यों मँगा रहे हैं?'' धर्मदास ने आश्चर्य से पूछा।

''कान के भीतर तलवार से हमला नहीं किया जा सकता। भाला नुकीला होता है। मैं उससे चींटी को मार डालूँगा।'' सेनापति ने गर्व भरे स्वर में बताया।

''लेकिन आपके भाले से तो राजकुमार के कान का पर्दा ही फट जाएगा।'' धर्मदास ने टोंका। उसे सेनापति की बात अत्यन्त मूर्खतापूर्ण लगी।

मूर्खराज, धर्मदास की बात अर्थ समझ गए थे। उसने सेनापति को डपटा- ''सेनापति जी! आप बहुत बड़े मूर्ख हैं। यदि आज धर्मदास जी नहीं होते तो आप मेरे बेटे को बहरा ही बना देते। निकल जाइये मेरे

दरबार से।''

सेनापति के जाने के बाद मूर्खराज ने प्रधानमंत्री की ओर देखा। प्रधानमंत्री ने तुरन्त एक सेवक को मशाल लाने के लिए कहा।

''प्रधानमंत्री जी! आप मशाल का क्या करेंगे?'' धर्मदास ने पूछा।

''आप इतने बड़े विद्वान होकर भी इतनी छोटी सी बात नहीं समझते।'' प्रधानमंत्री पहले व्यंग्य से हँसे फिर बोले- ''चींटियाँ गर्म चीजों से दूर भागती हैं। मैं मशाल से राजकुमार का कान गर्म करूँगा। उससे घबराकर चींटी तुरन्त दूर भाग जाएगी।''

मूर्खराज को प्रधानमंत्री की सलाह बहुत पसन्द आई। वे उन्हें शाबाशी देने जा ही रहे थे कि धर्मदास ने टोंक दिया- ''लेकिन मशाल से कान गरम करने पर तो राजकुमार का पूरा चेहरा ही जल जाएगा और वे कुरूप हो जाएँगे।''

यह सुनते ही मूर्खराज का क्रोध भड़क उठा। उसने चिल्लाते हुए कहा- ''प्रधानमंत्री जी! आप बिल्कुल मूर्ख हैं। यदि आज धर्मदास जी यहाँ न होते तो आप मेरे सुन्दर राजकुमार को जलाकर बिल्कुल भयानक बना देते। आप भी निकल जाइये मेरे दरबार से।''

प्रधानमंत्री जी के जाने के बाद मूर्खराज ने कोतवाल की ओर देखा। सेनापित और प्रधानमंत्री की गति देखकर वह सावधान हो गया था। अत: खतरे वाला कोई काम नहीं करना चाहता था। काफी सोच विचार कर उसने कहा- ''महाराज! आप राजकुमार के दाएँ कान को पकड़कर कसकर खींचिए। मैं उसके बाएँ कान में जोर से फूँक मारता हूँ। चींटी अपने आप उड़कर बाहर निकल जाएगी।''

यह तो बहुत आसान उपाय है और इसमें कोई खतरा भी नहीं है। मूर्खराज ने सोचा। वह कोतवाल को पुरस्कार घोषित करने जा ही रहा था कि तभी धर्मदास ने फिर टोंक दिया- ''कोतवाल साहब! क्या

आप राजकुमार की खोपड़ी को बिल्कुल खोखला समझते हैं जो इधर से फूँक मारेंगे और उधर से चींटी निकल जाएगी।''

यह सुन मूर्खराज का पारा चढ़ गया। उसने गरजते हुए कहा– ''कोतवाल साहब! आप भी बहुत बड़े मूर्ख हैं। आपका दिमाग बिल्कुल खाली है इसीलिए मेरे बेटे के दिमाग को भी खोखला समझते हैं। फौरन निकल जाइये मेरे दरबार से।''

कोतवाल साहब भी दरबार से निकल गए। उधर चींटी के काटने के कारण राजकुमार की चीखें बढ़ती जा रहीं थीं। यह देख मूर्खराज ने धर्मराज से प्रार्थना की– ''आप बहुत बड़े विद्वान हैं। आप ही मेरे बेटे का संकट दूर करिए।''

धर्मदास ने आँख बँद करके एक क्षण कुछ सोचा फिर कहा– ''महाराज! जल्दी से मिठाई मँगवाइये।''

''ब्राह्मण देवता! मेरे बेटे की जान जा रही है और आप मिठाई बँटवाने के लिए कह रहे हैं। मैं आपको फाँसी पर लटकवा दूँगा।'' मूर्खराज क्रोध से दहाड़ उठा।

मूर्खराज का क्रोध देखकर धर्मदास चंद क्षणों के लिए घबरा उठे फिर शांत स्वर में बोले– ''महाराज! मिठाई मैंने बँटवाने के लिए नहीं बल्कि राजकुमार की सहायता के लिए मँगवाई है।''

''मिठाई से भला कैसी सहायता हो सकती है?'' मूर्खराज ने उन्हें घूरा।

''आप जरा सी मिठाई राजकुमार के कान के पास लगवा दीजिए। उसकी गंध सूंघकर चींटी तुरन्त बाहर आ जाएगी और राजकुमार की समस्या हल हो जाएगी।'' धर्मदास ने समझाया।

बात मूर्खराज की समझ में आ गई उसने ऐसा ही किया। थोड़ी ही देर में चींटी बाहर निकल आई। राजकुमार खेलता–कूदता बाहर चला गया।

मूर्खराज, धर्मदास की विद्वता से बहुत प्रभावित हुआ। पहले ही दिन उन्होंने बहुत बड़ी समस्या को हल कर दिया था। प्रसन्न होकर उसने धर्मदास को पाँच हजार स्वर्ण मुद्राएँ और पाँच गाँव पुरस्कार में दे दिए।

रात होने पर धर्मदास ने विचार किया कि जितना उसने सोचा था यह तो उससे भी बड़े मूर्खों की नगरी है। जहाँ चींटी को मारने के लिए भाले का प्रयोग किया जाता हो और कान गरम किए जाते हों वहाँ अधिक समय रूकना खतरे से खाली नहीं है। मूर्खों का क्या भरोसा? पल भर में सिर पर बिठा लें और अगले ही पल धरती पर पटक दें।

वह उसी रात मूर्ख नगरी छोड़कर काशी वापस भाग आए। उनकी गरीबी अब दूर हो चुकी थी। मूर्खराज की दी हुई पाँच हजार स्वर्ण मुद्राएँ उनके पास जो थी।

– लखनऊ (उ. प्र.)

अंतिम प्रणाम प्रथम रक्षा प्रमुख जनरल विपिन रावत

इन्दौर। दिनाँक ०८ /१२/२०२१ को देश के प्रथम रक्षा प्रमुख जनरल विपिन रावत अपनी धर्मपत्नी श्रीमती मधुलिका रावत और साथियों ब्रिगेडियर लखबिंदर सिंह लिद्दर, ले. कर्नल हरजिंदर सिंह, विंग कमांडर पृथ्वीसिंह चौहान, स्वा. लीडर कुलदीप सिंह, जे. डब्लू. ओ. राणाप्रताप दास, जे. डब्लू. ओ. ए. प्रदीप, एन. के. गुरुसेवक सिंह, एन. के. जितेन्द्र कुमार, लाँस नायक विवेक कुमार, लाँस नायक बी. साँई तेजा एवं हवलदार सतपाल राय के साथ एक हेलिकॉप्टर दुर्घटना में असमय दिवंगत हो गए। जनरल रावत सहित देश के इन वीर लड़ाकों को देवपुत्र अश्रुपूरित श्रद्धाँजलि अर्पित करता है।

स्याही के दाग

चित्रकथा: देवांशु वत्स

भारत माता की पुकार

– डॉ. चक्रधर नलिन

देशरत्न 'सुभाष चन्द्र बोस' भारत के महान सपूतों में जाने जाते हैं। देशभक्ति और स्वाभिमान के वह पर्याय थे। बचपन में ही उन्होंने निश्चय कर लिया था वह भारत माता की सेवा करेंगे।

सुभाष अपने जीवन की सभी परीक्षाओं में प्रथम स्थान पाते रहे। उनके पिता की अभिलाषा थी कि मेरा बेटा आई. सी. एस. (उस काल की सर्वोच्च परीक्षा) बने और शान का जीवन बितावें।

परिवार की प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए वह आई. सी. एस. में द्वितीय स्थान से उत्तीर्ण हुए। अंग्रेजों को इस बुद्धिमान युवक को उसकी विलक्षण प्रतिभा के कारण आई. सी. एस. बनाना पड़ा। वह उनके राष्ट्रीय विचारों तथा अंग्रेजी शासन को अच्छा न समझने वाला भी समझते थे।

अंग्रेज अधिकारियों ने उन्हें इग्लैण्ड में मजिस्ट्रेट बना दिया और सभी प्रकार की सुविधाएँ तथा अधिकारों से सम्पन्न कर दिया। उन्हें यहाँ रहकर इग्लैण्ड की राजनीति तथा इनकी धूर्तता का वास्तविक परिचय मिला। उन्हें लगा कि उनकी माँ पराधीनता की हथकड़ियों तथा बेड़ियों से बँधी है तथा उन्हें पुकार रही है।

उन्होंने अपने पिता को पत्रों में लिखा कि– ''जब भारतमाता संकट में हैं और अंग्रेज शासन हटाने के लिए दुखी हैं तो मैं यहाँ सुखी और सम्पन्न जीवन कैसे बिताऊँ? माँ मुझे भारत आने के लिए पुकार रही हैं। मैं यहाँ एक क्षण भी रहने को तैयार नहीं हूँ।''

सुभाष को परिवार ने बहुत समझाया पर वह नहीं माने और मातृभूमि की सेवा के लिए नौकरी छोड़कर अपने देश आ गए। स्वाधीनता आंदोलन में कूद पड़े। उनका त्याग और सेवाभाव कभी भुलाया नहीं जा सकता।

– रायबरेली (उ. प्र.)

बाल प्रस्तुति

बेटी तेरी जय हो

– राधिका ठाकुर

तेरे लहराते आँचल से सँवर जाती है दुनिया,
तेरी मुस्कुराहट से निखर जाती है दुनिया।
मगर जब तू कमर कसती है तो बेटी,
काम देखने तेरे ठहर जाती है दुनिया।
चहुँओर हो रही है तेरी ही जय–जय कार,
बेटी तेरी जय हो तुमझो शत–शत नमस्कार।
तू कमला तू शारदा चण्डी का अवतार,
शक्ति रूप में पूजता तुझको ही संसार।

– ग्वालियर (म. प्र.)

गौरवशाली विश्वबंधु हूँ– मैं भारत हूँ

– राजेन्द्र श्रीवास्तव

दक्षिण में लहराता सागर।
अमित संपदाओं का आगर।
उत्तर में गिरिराज हिमालय–
मैं पर्वत हूँ।
मैं भारत हूँ।

यह विशेषता अद्भुत मेरी।
भाषा, धर्म, जाति, बहुतेरी।
फिर भी एक अखंड राष्ट्र हूँ–
अति उन्नत हूँ।
मैं भारत हूँ।

ज्ञान और विज्ञान समर्थक।
आध्यात्मिक पथ का पथदर्शक।
योग–साधना का मैं प्रेरक–
पारंगत हूँ।
मैं भारत हूँ।

शांति, एकता का अनुगामी।
खुद ही सेवक, खुद ही स्वामी।
मैं मीतों का मीत, शत्रु को–
मैं यमवत हूँ।
मैं भारत हूँ।

– विदिशा (म. प्र.)

कविता : बालिका दिवस २४ जनवरी

भारत की बेटी

– क्षमा पाण्डेय, भोपाल (म. प्र.)

मैं नन्ही गुड़िया हूँ माँ से, वह तलवार मंगाऊँ।
जिसे खेल छुटपुन में मैं भी, दुर्गा सी बन जाऊँ।।
खेल–खेल में तलवारों को, अपनी सखी बनाऊँ।
शक्तिरूप–परचम फहराऊँ, विजयी विश्व सदा लहराऊँ।।
दुर्गा रूप धरूँगी तो मैं, शक्ति–शालिनी हो जाऊँ।
दुश्मन को मारूंगी मैं भी, लक्ष्मीबाई कहलाऊँ।।
देश की रक्षा के खातिर मैं, सैनिक भी बन जाऊँ।
तलवारों की गरिमा रखकर, मैं वीरांगना हो जाऊँ।।
भारत की बेटी कहलाऊँ, शान–बान सब बन जाऊँ।
रक्षा की सौगंध है मेरी, मिट्टी में ही मिल जाऊँ।।
बेटी की महिमा हो सार्थक, यह संकल्प धराऊँ।
सब जन की प्रिय मैं हो जाऊँ, बेटा–बेटी भ्रम टरकाऊँ।।

पुस्तक परिचय

सुप्रसिद्ध रचनाकार ज्ञानदेव मुकेश की पीताम्बर पब्लिशिंग कम्पनी प्रा. लि. ८८८ ईस्टपार्क रोड करौल बाग नई दिल्ली-११०००५ द्वारा प्रकाशित चार बाल कहानी संग्रह जिनकी सरल शैली व बोधक विषय वस्तु आपको गुदगुदाएगी भी सिखाएगी भी।

चींटी की धरोहर

मूल्य ३५/-

चाँद की भूल भुलैया

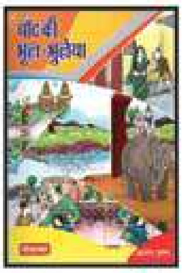

मूल्य ७०/-

मोम की परियाँ

मूल्य ७०/-

मन का दरवाजा

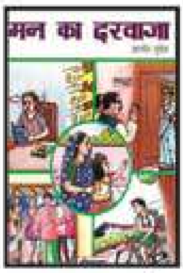

मूल्य ७०/-

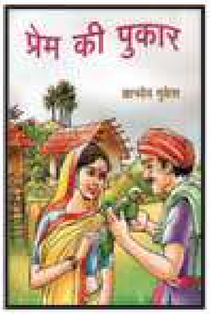

प्रेम की पुकार

मूल्य १००/-
प्रकाशक-ग्रन्थ सदन २७/१०९-ए/३ (भूतल)
शंकर गली के सामने मेन पांडव रोड,
जवाहर नगर, शाहदरा दिल्ली-११००३२

साथ ही पाँचवीं कहानी की किताब जिसमें बारह ऐसी बाल कथाएँ है जिन्हें पढ़ना रुचिकर तो है ही साथ ही वे नैतिक मूल्यों से भी भरपूर होने से आपके लिए अच्छी कहानियाँ हैं।

बोल चिरैया बोल

मूल्य १३०/-
प्रकाशक-अविचल प्रकाशन
सावित्री १५ वृन्दा विहार, निकट
अमृत आश्रम पो. कुसुमखेड़ा
ऊँचापुल हल्द्वानी (उत्तराखण्ड)

प्रसिद्ध रचनाशिल्पी डॉ. आर. पी. सारस्वत की २५ सुमधुर एवं नवीन विषय वस्तुओं पर केन्द्रित बाल गीत का सुन्दर गुलदस्ता। इस संग्रह की रचनाओं में सामयिक एवं नए विषयों पर बाल अनुभूतियों की अभिव्यक्ति एक ताजगी से भरपूर है।

बाघू के किस्से

मूल्य २००/-
प्रकाशक-प्रलेक प्रकाशन
प्रा. लि. ७०२, जे/५०, एवेन्यू-जे
ग्लोबल सिटी, विरार वेस्ट,
ठाणे-०३ (महाराष्ट्र)

प्रसिद्ध बाल रचनाकार दिशा ग्रोवर की यह बाल नाटकों की पुस्तक अपने रचना शिल्प और विषय की रोचकता से अनूठी है। सात नाटक है जिन्हें पढ़ते हुए आप उपन्यास, नाटक और किस्सों का आनन्द एक साथ अनुभव करेंगे।

चारण बनकर गाएँ

– बलदाऊ राम साहू

आओ बच्चो, हम सब मिलकर
भारत का जय गान करें।
इसकी माटी चंदन जैसी
झुककर इसे प्रणाम करें।।
भारत की है शान तिरंगा
आसमान में लहराएँ।
संघर्षों की पावन गाथा
बार–बार हम दोहराएँ।।
तीन रंग में तीन भाव हैं
उस पर हम अभिमान करें।।१।।
जिसने भी सर्वस्व त्यागकर
नव इतिहास बनाया है।
समर भूमि में प्राण गँवाकर
ध्वज का मान बढ़ाया है।।
हुए शहीद देश के हित जो
उनका हम गुणगान करें।।२।।
देवभूमि भारत में बच्चो
राम कोई बन आता है।
मर्यादा का पाठ पढ़ाकर
ईश्वर का पद पाता है।।
अवगुण त्यागें और सभी हम
सद्गुण का आह्वान करें।।३।।
सदाचार का राही बनकर
हम सब भी आगे आएँ।
भारत–भू की महती महिमा
यश, चारण बनकर गाएँ।।
विश्व–शांति की श्वेत पताका
लेकर गौरव गान करें।।४।।

– दुर्ग (छत्तीसगढ़)

डाक पंजीयन : एम.पी./आय.डी.सी./६२३/२०२१-२०२३ आर.एन.आय. पं. क्रं. ३८५७७/८५

प्रकाशन तिथि २०/१२/२०२१ प्रेषण तिथि ३०/१२/२०२१ प्रेषण स्थल- आर.एम.एस., इन्दौर

संस्कार संजोना अच्छी बात है संस्कार फैलाना और अच्छी बात।

वार्षिक शुल्क 180/-

पन्द्रहवर्षीय 1400/-

कृपया शुल्क भेजते समय चेक/ड्राफ्ट पर केवल 'सरस्वती बाल कल्याण न्यास' लिखें।

बाल साहित्य और संस्कारों का अग्रदूत

सचित्र प्रेरक बाल मासिक

देवपुत्र सचित्र प्रेरक बहुरंगी बाल मासिक

स्वयं पढ़िए औरों को पढ़ाइये

अब और आकर्षक साज-सज्जा के साथ

अवश्य देखें- वेबसाईट : www.devputra.com

देवपुत्र अब Jio Net पर भी !

सरस्वती बाल कल्याण न्यास, इन्दौर के लिए मुद्रक एवं प्रकाशन कृष्णकुमार अष्ठाना द्वारा टी.एन. ट्रेडर्स, सांवेर रोड, इन्दौर से मुद्रित एवं ४०, संवाद नगर, इन्दौर से प्रकाशित

प्रधान सम्पादक - कृष्णकुमार अष्ठाना